



जानावरणीय कर्म

मोहनीय कर्म

दर्शनावरणीय कर्म

आयुष्य कर्म

वेदनीय कर्म

गोत्र कर्म

अंतराय कर्म

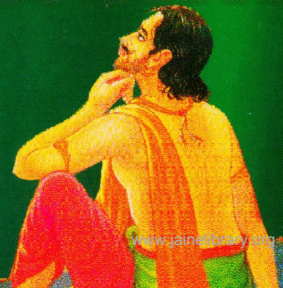
नाम कर्म

# रे कर्म !

# तेरी गति न्यायी...

दीक्षा दात्रेश्वरी आचार्य प्रवर

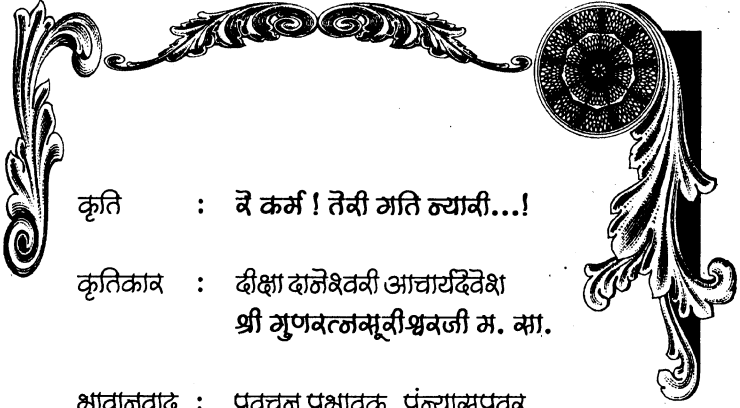
श्री गुणरत्नसूरीश्वरजी म. सा.





रं कर्म !  
तेरी  
गति  
न्यायी...!

द्विशताधिक दीक्षा दानेश्वरी  
आचार्यदेवेश  
श्रीमद् गुणरत्नसूरीश्वरजी म. सा.



कृति : वे कर्म ! तेवी गति न्यावी...!

कृतिकाव : दीक्षा दानेश्वरी आचार्यदिवेश  
श्री गुणवत्तम्बूरीश्वरजी म. सा.

भावांनुवादे : प्रवचन प्रभावंक, पंन्यासप्रवक  
श्री बक्षिमवत्तविजयजी म. सा.

मूल्य : 30/- तीस कपये  
(जिनगुण आवाधक ट्रक्ट)

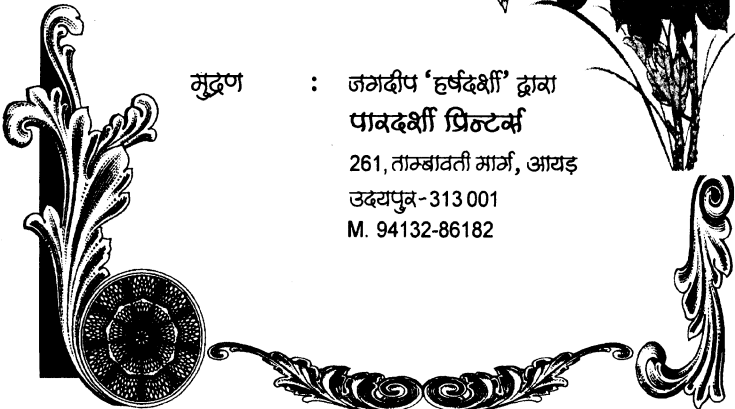
संख्या : 2000

संम् : 2008

प्रकाशक : जिनगुण आवाधक ट्रक्ट  
151, कीका स्ट्रीट, गुलालवाडी  
मुम्बई-400002  
फोन : 022-356947/357782



मुद्रण : जमदीप 'हर्षदर्शी' द्वारा  
पावदर्शी प्रिन्टर्स  
261, ताम्बावती मार्ग, आयड  
उदयपुर-313 001  
M. 94132-86182



# प्रकाशकीय

आज चहुँओर भौतिकवाद की भीषण आँधी के दुष्परिणामों की बौछार लगी हुई है। आज का नौजवान, यौवन की दहलीज पर पाँव रखते ही आत्मघाती सामाजिक विकृतियों की ओर घसीटता जा रहा है। आत्महत्या, बलात्कार, विद्रोह, हिंसा, लूटपाट आदि अपकृत्यों में फँसा-धँसा हमारा युवक, राम के बदले रावण की कार्बन कॉपी का लेबल खूब आसानी से पाता जा रहा है। चरित्रहीनता पराकाष्ठा पर पहुँच गई है। गुनाह करना पाप नहीं, गुनाह करके पकड़ा जाना पाप है....! यह विध्वंसक मान्यता आम जनता में जोर पकड़ती जा रही है। कर्मवाद की जड़ें हिल गई... उदात्त विचाराधाराओं की गड्ढाएँ सूख गई... धर्म की धारा उजड़ और बेजान-सी बन गई।

मनुजों के मन-मस्तिष्कों में और हृदय-सिंहासनों पर आसीन जब तक इस कर्मवाद की पुनः प्रतिष्ठा नहीं की जायेगी, तब तक इंसान को इंसानियत के नाम  $Zero$  शून्य के बराबर संसिद्धियाँ प्राप्त होगी।

युवकों के मनमस्तिष्क में कुक्कुरमुत्तों की तरह फैलती ओर पनपती जा रही अनाचार की अनवस्थितियों के जिम्मेदार सिर्फ युवक ही नहीं, हमारा बुजुर्गवर्ग भी है। यदि स्वात्मनिरीक्षण किया जायेगा तो इस हकीकत की सच्चाई दीपक की लौ की तरह चमकती और दमकती साफ-साफ नजर समक्ष तैरने लगेगी। न तो हमने उन्हें आध्यात्मिक ज्ञान के प्रेरणा स्रोत शिविरों के आयोजन कर आत्मा, परभव, नरक, मोक्ष, कर्मवाद आदि गहन विषयों का अवगाहन करने का मौका ही दिया है और न ही ऐसा कोई साहित्य ही छपवाया है।

हमारी युवापीढ़ी आज पथ से भटकती जा रही है....इसका दर्द संतों के दिल में कुंडली बनकर बैठा रहता है। वे वेदना से कराह उठते हैं। पू. गुरुदेव युवक जागृति प्रेरक, पूज्य आचार्य भगवंत श्रीमद्विजय गुणरत्नसूरीश्वरजी म. सा. के हृदय की इस छिपी वेदना को दूर करने के प्रयास स्वरूप विभिन्न पर्यटन एवं विख्यात तीर्थ स्थलों पर ग्रीष्मकालीन

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 3

एवं रविवारीय शिविरों का आयोजन किया.... जिसमें आज तक हजारों युवकों ने कर्मवाद आदि विषयों को समझकर अपने जीवन की काया पलट की। पूज्य गुरुदेवश्री की विलक्षण और सुबोध शैली से संस्कारित दुरुह कर्मवाद की प्रवचनधारा युवकों के मन भा गई। अन्य युवक भी इससे वंचित न रह जाय, इस हेतु यह पुस्तक प्रकाशित की जा रही है। गुजराती में इसके दो संस्करण छप चुके हैं।

अनुवाद : रचनात्मक भावानुवाद की साम्प्रतकालीन शैली को अनुलक्ष कर यह दुरुह कार्य पूज्य गुरुदेवश्री के आजीवनान्तेवासी, कई पुस्तकों के लेखक अनुवादक संपादक प्रवचन प्रभावक **पंन्यासप्रवर श्री रश्मिरत्नविजयजी म. सा.** को सौंपा गया। उन्होंने इस जिम्मेदारी का बखूबी निर्वहन करते हुए अपना समय दिया, तदर्थ हम उनको नतमस्तक भावभरी वंदना करते हैं।

इस पुस्तक में हमने चित्रों का माध्यम भी रखा है....जिससे विषय बिल्कुल सहज ढंग से गले उतर जाय।

पूज्य गुरुदेव आचार्य भगवंतश्री कर्म-साहित्य के सुप्रसिद्ध विद्वानों में से एक हैं। आपश्री की संस्कृत-प्राकृत भाषा निबद्ध कृति 'क्षपकश्रेणि' (खवगसेढी) ने विद्वानों की मंडली में काफी कीर्ति उपार्जित की है। जर्मनी की बर्लिन युनिवर्सिटी के कर्मसाहित्य पर रिसर्च कर रहे प्रो. क्लाउज ब्रून ने तो यहाँ तक लिख दिया "जैनदर्शन के कर्मवाद को समझने के लिये यह ग्रन्थ हमें काफी सहायता प्रदान कर रहा है। आपने कमाल कर दिया....गागर में सागर भर दिया.....!!"

पूज्य गुरुदेव आचार्य भगवंतश्री की देश-विदेशों में ख्याति प्राप्त इस विद्वता का लाभ हमारी युवापीढी को भी मिले...इस उद्देश्य से यह पुस्तक प्रकाशित की जा रही है।

पाठकगण ! इस पुस्तक के विषय में आपके मुक्त विचार, सुझाव आदि का स्वागत रहेगा। जाने-अनजाने यदि वीतराग परमात्मा के विरुद्ध कुछ भी मुद्रित हुआ हो तो त्रिविध-त्रिविध मिच्छामि दुक्कडं।

-जिनगुण आराधक ट्रस्ट, मुम्बई

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 4

# रे कर्म ! तेरी गति न्यायी !!

प्रवचन-1

## कर्मबन्ध और उसकी प्रक्रिया

नाणं पयासगं सोहगो, तवो संजमो गुत्तिकरो ।  
तिण्हं पि समाओगे, मोक्खो जिणसासणे भणिओ ॥  
अनंत उपकारी शास्त्रकार भगवंत फरमाते हैं कि  
ज्ञान प्रकाशक है,  
तप संशोधक है और  
संयम गुप्तिकार है ।

इन तीनों का जब समागम होता है, तब आत्मा का मोक्ष होता है ।

### ज्ञान प्रकाशक है...

आत्मा में रहे हुए कर्म और उनके अच्छे-बुरे फल आदि की जानकारी ज्ञान के द्वारा ही प्राप्त होती है । धुप्प अंधेरे में बल्ब की रोशनी जब झगमगा उठती है, तब कहाँ क्या पड़ा है? वह नजर आता है, वरना पग-पग पर गिरने का.....ठोकरे खाने का भय सिर पर सवार रहता है... न मालूम बीच में कैसी-कैसी चीजें बिखरी पड़ी हो ?

### तप संशोधक और संयम गुप्तिकार है

राजस्थान के छोटे से कस्बे में एक संत का प्रवास हुआ । साधु-संत वहाँ पिछले दस सालों से आये नहीं थे । खूब भाव-

रे कर्म तेरी गति न्यायी...!! / 5

भक्ति की। संत अचानक पहुँचे थे, इसलिए भक्त ठहरने की व्यवस्था कुछ नहीं कर पाये थे। उपाश्रय-स्थानक अथवा धर्मशाला जैसा गाँव में कुछ भी नहीं था। इसलिए एक आलीशान घर में संत ने रात गुजर-बसर करने का निर्णय लिया। सेठ बरसों से मुम्बई में रहते थे। चाबी पड़ोस में थी। मकान खोल कर देखा तो लोग हैरत में पड़ गये। कचरा अनाप-शनाप पड़ा हुआ था। चारों ओर धूल बिखरी हुई पड़ी थी। आँधी-तूफान की करतूत साफ-साफ नजर आ रही थी।

सबसे पहला काम उन्होंने यह किया कि प्रकाश में यह देख लिया कि कचरा और धूल कहाँ-कहाँ जमी हुई है? तत्पश्चात् उन्होंने सभी खिड़कियाँ बन्द कर दी, चूँकि बाहर आँधी दूर-दूर क्षितिज पर रूप ले रही थी, धूल से दिशाएँ रंगीन होने लगी थी....

प्रकाश में देखने के बाद उन्होंने सात-आठ बहिनों के हाथ में झाड़ू थमा दिये....सफाई अभियान चालू हो गया। थोड़ी ही देर में संत ने देखा मकान की रौनक ही बदल गई....फर्श साफ-सुथरी (Neat & Clean) कर दी गई थी.....

अनादि काल से आत्मा रूपी घर में कर्म-कचरे ने अपना अड्डा जमाया हुआ है। ज्ञान का प्रकाश होते ही हमें कर्मसत्ता का पूरा ख्याल हो आता है...।

फिर हम तप रूपी झाड़ू लेते हैं हाथ में....चूँकि तप संशोधक है....इसके बावजूद हम देखते हैं कि हम एक काम करना तो गोया भूल ही गये। हम थोड़ा निकालते हैं कर्म रूपी कचरा और ऊधर देखते हैं तो ढेर सारा नया घूस आया है अंदर.... चूँकि असंयम रूपी खिड़कियाँ हमने बेपरवाही से यों ही खुल्ली छोड़ रखी थी....और

२ कर्म तेरी गति न्यारी...॥ } ६

हमारे सफाई अभियान में पग-पग पर अवरोध पैदा होते जा रहे हैं....तुरन्त हम उठते हैं और धम्म कर एक-एक खिड़कियाँ बंद कर देते हैं....यही है संयम, नया कर्म कचरा न आने देने वाला ।

अब ज्ञान-तप-संयम इन तीनों का सुयोग होते ही आत्मा का मोक्ष हो ही जाता है....ऐसा जैनदर्शन में जिनेश्वर परमात्मा ने फरमाया है ।

## बन्धन तोड़ो

हाथी को बन्धन है अंकुश का.....घोड़े को बन्धन है लगाम का.....सर्प को बन्धन है करंडिये का.....कुत्ते को बन्धन है गले के पट्टे का.....पक्षी को बन्धन है पिंजरे का.....पुरुष को बन्धन है स्त्री का.... और ठीक उसी प्रकार आत्मा को बन्धन है कर्म का ! जब तक आत्मा को इस बन्धन से मुक्ति नहीं मिलती तब तक उसे चौयासी के चक्कर के भटकन में फँसा-धँसा रहना पड़ता है... ।

एक स्थान से दूसरे स्थान पर जन्म लेना....जैसे-तैसे जीना....सुख की इच्छा होते हुए भी दुःख की खाई में जाना....मरने की तनिक भी इच्छा न हो तो भी जबरन मरना....और मरने के बाद भी ऐसे-ऐसे नये शरीर-रूप-रंग धारण करने पड़ते हैं.....जिनसे हमें सख्त नफरत हो, यह सब कर्मों का ही तो फल है ।

कर्मबन्धन के कारण अपनी इस आत्मा ने अनगिनत शरीर ग्रहण किए हैं और छोड़े हैं....एक लेखक ने कहा भी है-

The Real fetter to the soul is subtle body which is called Karman body. Due to subtle body soul encased in one and casting it off wears another, hence bears the burden of different bodies.

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 7



अपनी आत्मा इन कर्मों के जटिल बन्धनों से जब मुक्त बनेगी तब उसमें रहे हुए 1. अनंत ज्ञान (जगत के तमाम पदार्थों के भूत-भविष्य और वर्तमान में रही हुई अनंत पर्यायों को जिसके माध्यम से जाना जाय वह ज्ञान) 2. अनंत दर्शन 3. वीतराग भाव 4. अनंत सुख 5. अक्षयस्थिति 6. अरूपीपना 7. अगुरुलघुपना 8. अनंत शक्ति - ये आठों गुण प्रगट हो जायेंगे....यूँ देखा जाय तो चार घातिकर्मों का नाश कर जब आत्मा केवलज्ञानी बन जाती है तब ही चार गुण तो प्रगट हो जाते हैं....और शेष चार अघाति कर्मों का क्षय करने पर दूसरे चार प्रगट हो जाते हैं.....इस प्रकार आत्मा जब कर्मों से सर्वथा मुक्त बनकर सिद्धावस्था को प्राप्त करती है, तब उसमें सदा काल के लिये आठों गुण मौजूद रहते हैं।

कर्म के कारण आत्मा के ये आठों गुण दबे हुए रहते हैं, अतः संसारी आत्मा को सभी पदार्थों का संपूर्ण रूप से ज्ञान नहीं होता है। अनंत सुख का अनुभव नहीं होता है।

## दुर्घटनाएँ क्यों ?

अभी-अभी एक प्लेन क्रेश हुआ था, जिसमें एक छोटा-सा बालक ही जीवित रह पाया, शेष सभी यात्रिकों ने मौत के दरवाजे खटखटाये.....ऐसा क्यों हुआ ? 'द अनसिकेबल टाइटेनिक' (Titanic) बर्फ की पहाड़ी (ग्लेशियर) की टक्कर खाकर समुद्र में डूब गया। उसको बनाने वाले ने तो छाती ठोक कर कहा था कि यह जहाज अपने आप में आला दर्जे का है....किसी भी हालत में डूबेगा नहीं...। परन्तु हाय ! उसने तो अपनी प्रथम यात्रा (Maiden Voyage) में ही जलसमाधि ले ली।

अफ्रिका के टेनेराइफ शहर में 28 मार्च 1969 में लोस रोड्ज एयरफिल्ड के ऊपर दो जम्बोजेट विमान आपस में भीड़

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 8

गये....उस पर सवार 620 यात्रिकों को जीवन से हाथ धोना पड़ा...उसमें कारण कौन ? क्या कंट्रोल टावर की भूल ? नहीं...नहीं... कंट्रोल टॉवर ने तो स्वस्थ होकर ही ऑर्डर दिया था 'जम्बो टेक ऑफ' .....हाँ, नंबर कहना भूल गया तो दोनों ने एक ही साथ अपने रन-वे पर दौड़ना शुरू कर दिया....धुम्मस में पता न चला और जब पता चला तब तक तो काफी देर हो चुकी थी.....बेचारा पायलोट काफी सतर्क था फिर भी इस अनहोनी को टाल नहीं सका और अचरज तो तब होता है जब 674 यात्रिकों में से 54 यात्रिक जिंदा बाहर निकलते हैं.....आखिर ऐसा क्यों ?

बाह्य दृष्टि से तो कई कारण हो सकते हैं....जैसे कि कंट्रोल टॉवर नंबर कहना भूल गया.....परन्तु वह उसी दिन क्यों भूला ? इसका जवाब किसी के पास नहीं है.....जैनदर्शन के कर्म सिद्धांत के पास इसकी उत्तम चाबी है....लाजवाबी जवाब है.....कर्म के उदय के कारण ही टॉवर की भूल हुई.....620 का आयुष्य कर्म उसी दिन सोपक्रमी या निरूपक्रमी पूरा हुआ, इसीलिये उन्हें मौत की मेजबानी माननी पड़ी, अन्य 54 बाल-बाल बच गये।

यदि हर जगह हम बाह्य कारणों को ही महत्त्व देते रहेंगे तो सुनिये जापान का किस्सा....वैसे मेकेनिकल टेक्नोलॉजी में जापान बिनहरिफ माना जाता है.....1923 में टोकियो शहर में ही भयंकर भूकंप हुआ और एक लाख चालीस हजार वृद्ध, नौजवान देखते ही देखते धरती में समा गये....सुपर टेक्नोलॉजी हाथ मलते रह गई..... ईराक के साथ वर्षों से संघर्षरत इस्लाम के कट्टरपंथी ईरान में सन् 1990 में छब्बीस हजार मनुष्य, मेक्सिको और रशिया के भूकंप में लाखों लोग मौत के निर्दयी दाँतों में पीसे गये.... कौन है

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 9

इसमें कारण ? इसलिये हमें मानना पड़ता है कि कर्म जैसी कोई अदृश्य शक्ति है, जिसके कारण ही ये सभी घटनाएँ और दुर्घटनाएँ घटती जा रही हैं..... 'सावधानी हटी, दुर्घटनाएँ घटी' यह सूत्र तो बाहरी कारणों को लेकर ही है।

ऐसे ही दिल दहलाने वाली हम तीसरी दुर्घटना देखते हैं.... पश्चिम पाकिस्तान बांग्लादेश में 1974 के जून महीने में ब्रह्मपुत्रा नदी बाढ़ से पागल हो गई.....उसकी चपेट में करीब अस्सी हजार घर आ गए..... भयंकर प्रलयकारी विनाश हुआ....चारों ओर हाहाकार मच गई। सुनामी का आतंक सन् 2000, 26 जनवरी में कच्छ का भयानक भूकंप-गतवर्ष सूरत में जल-प्रलय सा माहौल....इस वर्ष सन् 2008 में म्यांमर में नरगीस से लाखों की जानमाल हानि.....ऐसे तो अनगिनत प्रसंग गिनाये जा सकते हैं। इन सभी घटनाओं में 'रे कर्म ! तेरी गति न्यारी' ही मानना पड़ेगा।

## चक्रवर्ती सनत और कर्म रोग

सौधर्म देवलोक में इन्द्र महाराजा सिंहासनारूढ़ थे। वे अपने अवधिज्ञान से भूमितल को देख रहे थे कि यकायक उनका ध्यान सनतकुमार चक्रवर्ती के रूप-लावण्य पर केन्द्रित हो गया... 'अहो! एक मानव होते हुए भी चक्रवर्ती सनत का कितना अद्भुत देह का सौंदर्य और रूप लावण्य है.....!

दो ईर्ष्यालु देवों से यह प्रशंसा सही नहीं गई और वे तुरन्त मानवलोक में आये। ब्राह्मण का रूप धारण किया और जहाँ सनतकुमार था वहाँ पहुँच गये। योगानुयोग उस वक्त स्नान से पूर्व पीठी का कार्यक्रम चल रहा था। देह पर जगह-जगह कस्तूरी आदि के धब्बे लगे हुए थे.....ब्राह्मण रूपधारी दोनों देव चकित रह गये....ओह ! इतना अद्भुत रूप...एक मल-मूत्र-श्लेष्म-विष्ठा से

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /10

भरी हुई मानव काया का ! वे मन्त्रमुग्ध हो गये और उनका सिर डोलाने लगे..... ।

‘क्या देख रहे हो ?’ सनतकुमार ने पूछा ।

जवाब था ‘आपका अद्भुत रूप ।’

‘अरे, अब ?’

‘हाँ, क्यों ?’

‘अरे, अब कोई रूप देखने का समय है ?....कहीं केसर.... कहीं कस्तूरी के....अनगिनत रंग-बिरंगे धब्बे पड़े हुए हैं। यदि रूप देखना ही हो तो’ रूप के मद से मत्त हो उठा सनत चक्री। वह कह रहा था....‘अभी नहीं, बाद में आना..’

‘एक नूर आदमी, हजार नूर कपड़ा। लाख नूर वाणी, करोड़ नूर नखरा।’ आदमी का अपना तो एक ही नूर होता है, मगर जब वह कपड़े पहिन लेता है, तब उसका नूर-तेज हजार गुना बढ़ जाता है। इन्टरव्यू में जाना हो तब अपने घर में सूट न हो तो भी किसी दोस्त से माँग कर ले आता हैं.....जानता हैं कि इससे नूर बढ़ जायेगा....पर्सनालिटी पड़ेगी..... मगर यदि वहाँ बोलना नहीं आता है, तो मुँह नीचा कर अपना-सा मुँह लिये घर लौटना पड़ता है....क्योंकि वाणी से आदमी का नूर लाख गुना बढ़ जाता है और वही वाणी जब एक्टिंग के साथ हो तो.....वाह ! जी वाह ! क्या कहने.... । आदमी का नूर करोड़ गुना बढ़ जाता है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए सनतकुमार ने कहा - अभी नहीं, बाद में....हाँ, बाद में जब मैं नहा-धोकर बढ़िया से बढ़िया राजशाही कपड़े पहन लूँ....आभूषणों से अपना श्रृंगार कर लूँ.....सिंहासन पर बैठ कर जब हुक्म चलाऊँ, तब मेरी देह की कान्ति और रूप को भरपेट निहारना.... ।’

रे कर्म तेरी गति न्यारी....!! /11

निर्देशानुसार कुछ समय पश्चात् ब्राह्मणतपधारी दोनों देवता राजसभा में उपस्थित हुए, वहाँ और सब कुछ तो ठीक था मगर जैसे ही उन्होंने सनतकुमार को देखा.....थू....थू...करने लगे।

‘अरे, यह क्या कर रहे हो?’ चक्रवर्ती सनतकुमार ने साश्चर्य पूछा।

‘पलट गईं तुझ काया, म कर ममता माया’ यह कहकर ब्राह्मणों ने उसे चौंका दिया...।

‘पलट गई काया ? क्या पलट गई ? कहाँ पलट गई ?’

‘सोल रोग तेरी काय में उपन्या, गर्व म धर कूडी काया !!’

‘क्या कहा ? मेरी देह में भयंकर सोलह महारोग ?’

‘जी हाँ, सत्य है ! यदि हमारी बात पर विश्वास न हो तो ताम्बूल पिकदानी में थूँककर देखिये, उसमें भयंकर बदबू आयेगी....।’

चक्रवर्ती ने पिकदानी में थूँका....भयंकर बदबू आ रही थी...चक्रवर्ती के तंबोल-पान में तो खुशबू ही खुशबू होती है, मगर यह असह्य दुर्गंध देखकर सनत चक्रवर्ती खड़े हो गये.....‘इन सभी शारीरिक रोगों की जड़ कर्मरोग है....उसको दूर किये बिना वैद्य-हकीमों को बुलाकर शरीर का इलाज करवाने का कोई अर्थ नहीं है....सिर्फ समय और शक्ति को बरबाद करना है (Waste of Time & Energy) और इस कर्मरोग को दूर करने के लिये चारित्र जैसा अमोघ उपाय दूसरा कोई नहीं है...।’ वैराग्यवासित बनकर सनतकुमार ने जैसे चादर निकालकर फेंकते हैं, उतनी ही सहजता के साथ छः खंड का सार्वभौमत्व, नवनिधि-चौदहरत्न आदि अथाह धन-संपत्ति-ऋद्धि-समृद्धि, एक लाख बावन हजार स्त्री परिवार

३ कर्म तेरी गति न्यारी...!! /12

आदि को तिनके की भाँति छोड़ दिया और निर्मोही बनकर तुरन्त चास्त्रि ले लिया...माता-पिता-स्त्री परिवार आदि महिनों तक उनके पीछे-पीछे आँसू बहाते हुए घूमते रहे..... रो-रोकर पुकारते रहे, अरे ! पतिदेव ! अरे पुत्र ! हमारी ओर अपनी नजर तो करों । परन्तु वीर सनतकुमार आत्मसाधना में लीन हो चुके थे....ममता से परे हटकर समता में डूब चुके थे.... ।

तप साधना के बल पर उन्हें कई लब्धियाँ भी उत्पन्न हो गई थी....वे चाहते तो कोढ़ से झरते अपने शरीर को चन्द मिनटों में निरोगी बना सकते थे, मगर...उन्हें काया से क्या मतलब ?

वैद्य का रूप लेकर देव आया...अरज की....आपकी आज्ञा हो तो मैं आपके शरीर का ईलाज करूँ ? निरीह मुनि ने थूँक को अपनी अंगुली पर लगाया.....अंगुली की रौनक ही बदल गई.....और उन्होंने कहा "देखा न, ईलाज बाहर से लाने की जरूरत ही नहीं है....मगर जितना मैं ज्यादा सहता हूँ.....उतना कर्मरोग नष्ट होता है।" सात सौ वर्ष के बाद रोग अपने आप शांत हो गये । लाख वर्ष तक दीक्षा का पालन किया और साधना के बल पर तीसरे देवलोक में गये ।

कर्म की विचित्रता- उपर्युक्त दृष्टान्तों से 'सभी रोगों का मूल कर्मरोग है' यह बात हमारे गले सीधी-सीधी उतर जाती है ।

## विषमताएँ क्यों ?

आज आदमी सुख-शांति के साधनों को प्राप्त करने के लिये भरपूर प्रयास करता है.....फिर भी वह अनेक विषमताएँ एवं विचित्रताओं का भोग बन जाता है.... ।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /13

उदाहरण के तौर पर सोचिये....!

(1) ज्ञान प्राप्ति के लिये एक विद्यार्थी नहीं के बराबर मेहनत करता है, तो भी सर्वश्रेष्ठ अंक प्राप्त कर लेता है....जबकि दूसरा विद्यार्थी रात-दिन तन-तोड़ परिश्रम करता है, फिर भी वह परीक्षा में असफल रहता है....!

(2) एक आदमी अपनी आँखों से कई दर्शनीय स्थलों के दर्शन करता है....कभी शत्रुंजय गिरिराज स्थित परमात्मा आदिनाथ के दर्शन कर अपनी आँख को पवित्र करता है, तो कभी गिरनारजी के बालब्रह्मचारी नेमिनाथ प्रभु के दर्शन कर.....!

जबकि दूसरा आदमी अपनी सारी जिन्दगी अंधापे में गुजारता है....वह किसी भी चीज को देख ही नहीं पाता है....!

(3) एक आदमी अनेक भौतिक सुख सामग्रियों को प्राप्त कर उनका परिभोग कर आनन्द का अनुभव करता है..... जबकि दूसरा एक आदमी रोग का शिकार होकर जीवन पर्यन्त शय्या पर पड़ा-पड़ा असह्य वेदना से छटपटाता है.....दुःख भुगतता है।

(4) एक आदमी स्त्री-पुरुष परिवार के साथ अपना जीवन हँसी-खुशी में काटता हैं, तो कई आदमी जंगल-जेलों में अपना जीवन बिताते हैं.....मारे-मारे भटकते फिरते हैं....!

(5) एक आदमी रातों-रात सुपरस्टार बन जाता है....दूसरा आदमी जिन्दगी भर कुछ भी बन नहीं पाता....एक लोकप्रिय होता है, तो दूसरा अत्यन्त अप्रिय.....!

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /14

(6) एक का स्वर कोयल की तरह मीठा मधुर होता है, तो दूसरे का गधे से भी गया बीता हुआ, भैंसासुर होता है....!

(7) एक आदमी दुर्गन्धमय वस्तुओं से कोसों दूर रहता है, जबकि दूसरा उसी में जीवन बिताता है....!

(8) एक आदमी खरबपति से लखपति और करोड़पति से रोड़पति हो जाता है, तो दूसरा लखपति से खरबपति, रोड़पति से करोड़पति बन जाता है.....एक व्यक्ति व्यापार में लाखों रुपये बटोर लेता है, तो दूसरा जो है उसे भी खो देता है.....एक व्यक्ति फोन उठाता है और उसे लाखों रुपयों की आय हो जाती है, तो दूसरे व्यक्ति को दिन-रात जी-तोड़ प्रयास करने पर भी पेट का खड्डा भर सके, उतना भी मयस्सर नहीं होता.....!

उपर्युक्त बातों में विषमताएँ बताई गई हैं। सभी का कारण क्या ? यह हमें सोचना जरूरी है....!

## प्रथम विचारधारा

कितने ही लोगों का मानना है कि विषमताएँ अपने आप उत्पन्न होती हैं और नष्ट हो जाती हैं....कोई कारण नहीं है उसके पीछे...जैसे कि पानी की बुदबुदे....!

परन्तु यह मान्यता तर्क की कसौटी पर खरी नहीं उतरती है चूँकि यदि बिना किसी कारण के ही चीज उत्पन्न हो जाती है, तो पानी में से आग क्यों नहीं उत्पन्न होती ? पानी के बुदबुदों में भी हवा वगैरह को कारण माना ही जा सकता है....!

रे कर्म तेरी गति न्यारी....!! /15



## दूसरी विचारधारा

तो किन्हीं लोगों का मानना है कि ऐसी विषमताएँ भगवान के द्वारा उत्पन्न की जाती है, चूँकि भगवान ही सुख-दुःख के कर्ता-हर्ता हैं....जगन्नियंता सर्वशक्तिमान व्यापक विभु हैं। यह भी विचारधारा जँचती नहीं है, क्योंकि अनंत करुणा के स्वामी, वात्सल्य के सागर परमपिता परमेश्वर एक को सुखी और दूसरे को दुःखी क्यों बनावें ? क्यों न सभी को सुखी बनाता ?

## तीसरी विचारधारा

जहाँ कार्य होता है, उसके पीछे अवश्यमेव कुछ न कुछ कारण होता है। इस वैश्विक सिद्धान्त के आधार पर इस नतीजे पर आते हैं कि जहाँ बाह्य कारण न भी दिखे तो भी आंतरिक कारण तो अवश्यमेव मानना चाहिये। कार्य और कारण (Cause and Effect) का सिद्धांत (Theory) तो हर एक विचारशील मनुष्य स्वीकारता ही है। अतः ऊपर्युक्त विषमताओं का आंतरिक कारण ज्ञानावरण आदि आठ कर्मों को मानना चाहिये और यह कर्मवाद का सिद्धांत सर्वज्ञ ऐसे तीर्थंकर परमात्मा द्वारा प्ररूपित है...!

पोल ब्रंटन (Paul Brunton) का मत- आधुनिक जगत के प्रसिद्ध लेखक पॉल ब्रंटन ने अपनी पुस्तक 'टीचिंग बियोड दी योग(Teaching Beyond the Yoga)' में लिखा है कि कर्म सिद्धांत ईशु के उपदेशों में से निकाल दिया गया, अब उसकी पुनः प्रतिष्ठा करनी चाहिये। यह कार्य आज के युग की परिस्थिति को देखकर अत्यन्त आवश्यक लग रहा है। युग की इस माँग को देखकर विचारकों को विवश होकर भी इस ओर दो कदम बढ़ाने चाहिये। पुनर्जन्म और कर्म सिद्धांत राष्ट्र को स्वावलम्बी बनाता है। इन दोनों

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 16

में न तो अन्धश्रद्धा है और न ही विवेक शून्यता या असंबद्धता का अवकाश।

वैसे ही दूसरी लेखिका **सीबल लीक** अपनी पुस्तक 'री-इनकारनेशन ध सेंकड चान्स' में लिखती है कि अज्ञान के कारण हम कर्मों का या कर्मबन्धनों का अस्वीकार कर सकते हैं, परन्तु कर्म हमारा अस्वीकार करता नहीं है, वह तो आपको चिपक ही जाता है।

प्रवेशबंद का बोर्ड लगा हुआ हो और आपने इधर-उधर चौराहे पर नजर घुमाई पुलिस दिखाई न दी.....आप निश्चित होकर अपनी मारुति वेन पार्क कर देते हैं....मगर आप जैसे ही अपना काम पूर्ण कर आते हैं, खाकी वर्दी पहने पुलिस को तैयार पाते हैं, चूँकि (We can ignore the policeman but he won't ignore us) अर्थात् हम सोच सकते हैं कि पुलिसमेन हमें नहीं देख रहा है, मगर पुलिसमेन की चौकन्नी नजर हमारे ऊपर रहती ही है, उसी तरह यहाँ पर भी कर्म-मामा तैयार है।

## आत्मा द्वारा कर्मग्रहण प्रक्रिया

विश्व की समस्त विषमताओं का वैश्विक कारण कर्म है। ऐसा कई दर्शनकारों ने भी स्वीकार किया है....फिर भी एक जैन-दर्शन में ही उसका अत्यन्त विस्तारपूर्वक सूक्ष्म विश्लेषण किया गया है। दूसरे दर्शनकारों ने तो सिर्फ इतना ही कहा है - कर्म यानि क्रिया। परन्तु यदि कर्म का अर्थ सिर्फ क्रिया ही होता, तो फिर अमुक समय में जब क्रिया नष्ट हो जाती है, तब कालान्तर में उसका फल कैसे मिलता है ? खाया आज और क्या दस दिन के बाद पेट भरता है....तृप्ति होती है.....? असंभव !

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /17

जैनदर्शन कहता है कि जब हमारे मन, वचन और काया की शुभ या अशुभ क्रिया होती है, तब विश्व के कोने-कोने में प्रसरी हुई कार्मणवर्गणा को (पुद्गल परमाणुओं का एक जथ्था, जिसका विशेष वर्णन आगे के प्रकरणों में किया जायेगा) अपनी आत्मा मिथ्यात्व आदि के कारण ग्रहण कर दूध और पानी की तरह अथवा लोहा और आग की तरह एकमेक कर कर्म बना देती है।

कार्मणवर्गणा से कर्म बनता है....कार्मणवर्गणा में सुख या दुःख देने की ताकत नहीं है....परन्तु ज्योंहि आत्मा उसे ग्रहण कर कर्मरूप बनाती है....उसी वक्त उसमें सुख-दुःख देने की.....ज्ञानादि रोकने की आदि नानाविध शक्तियाँ उत्पन्न होती है।

जैसे कि घास आदि गाय के पेट में परिणाम पाते हैं, तब दूध में मिठास आदि गुणधर्म उत्पन्न होते हैं....अथवा पानी और आटे को मिलाने के बाद उससे बनी हुई इडली आदि में खटाई आदि नये स्वभाव उत्पन्न होते हैं।

ये कर्म आत्मा के साथ जुड़े हुए रहते हैं और कालान्तर में जब वे उदय में आते हैं, तब सुख-दुःख आदि फल देते हैं।

### कर्मग्रहण प्रक्रिया व प्रसारण केन्द्र की उपमा

आत्मा कार्मणवर्गणा को ग्रहण करती है....आइये, अब इस हकीकत को हम रेडियो और प्रसारण केन्द्र के माध्यम से समझें।

जैसे प्रसारण केन्द्र से कोई व्यक्ति समाचार प्रसारित करता है, तब ध्वनितरंगे ट्रांसमीटर द्वारा विद्युततरंगों में परिवर्तित हो जाती है। तदन्तर विद्युत तरंगे विश्व के कोने-कोने में फैल जाती है। कारण कि विद्युत की गति एक सेकंड में 1,86,000 माइल है। जब कोई व्यक्ति अपने रेडियो यन्त्र को स्टार्टर से चालू कर ट्यूनर से स्टेशन लगाता है...., तब विद्युत तरंगों को रेडियो यंत्र ग्रहण करता

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /18

है। तदन्तर ली हुई उन समूची विद्युत तरंगों को डिटेक्टर ध्वनि तरंगों में रूपान्तरित कर देता है, तब जाकर कहीं बात बनती है और रेडियो यंत्र के लाउडस्पीकर से हमें अच्छे या बुरे समाचार सुनने को मिलते हैं।

ठीक इस ढाँचे में आत्मा के द्वारा कर्मग्रहण की प्रक्रिया ढली हुई है। पुद्गलास्तिकाय रूप ध्वनितरंगों को प्राकृतिक वातावरण रूपी ट्रांसमीटर कार्मणवर्गणा रूप विद्युत तरंगों में परावर्तित कर देता है और कार्मणवर्गणा भी ठीक विद्युत तरंगों की तरह विश्व के कोने-कोने में प्रसारित हो जाती है।

जब कोई एक आत्मा मिथ्यात्व अविरति प्रमाद कषाय योग रूपी कर्मबन्धन के स्टार्टरों को ऑन करके शरीर नामकर्म के उदय रूपी ट्यूनर से कार्मणवर्गणा रूपी विद्युत तरंगों को ग्रहण करती है तब....आत्मा रूपी डिटेक्टर उन कार्मणवर्गणा रूपी विद्युत तरंगों को कर्मरूपी ध्वनि तरंगों में बदल लेता है। तत्पश्चात् जब कर्म उदय में आता है.....तब सुख-दुःख अनुभव की धरा पर अवतरित होते हैं।

(1) प्रसारण केन्द्र- ट्रांसमीटर द्वारा ध्वनितरंगों का विद्युततरंगों में परिवर्तन।

अ. प्राकृतिक वातावरण द्वारा पुद्गलास्तिकाय का कार्मणवर्गणा में परिवर्तन।

(2) विश्व के कोने-कोने में फैलना- रेडियो स्टार्टर ऑन।

ब. विश्व में फैलना- मिथ्यात्व आदि कर्मबन्धन के कारणों से कर्मबन्ध।

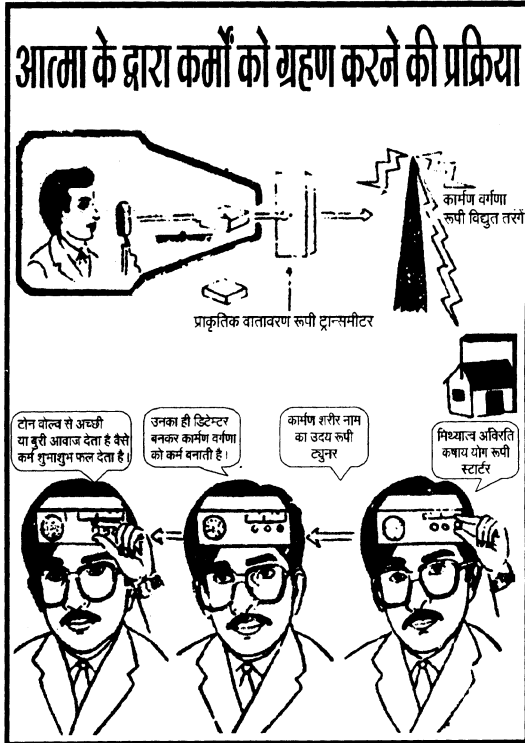
(3) ट्यूनर द्वारा विद्युत तरंगों का ग्रहण- डिटेक्टर द्वारा विद्युत तरंगों को ध्वनितरंगों में परावर्तन ।

स. कार्मण शरीर नामकर्म द्वारा कार्मणवर्गणा ग्रहण- आत्मा द्वारा कार्मणवर्गणा को कर्म में परिवर्तित करना ।

(4) लाउडस्पीकर द्वारा अच्छे-बुरे समाचार ।

द. कर्म के उदय आने पर सुख-दुःख आदि का अनुभव ।

उपर्युक्त तालिका में 1-2-3-4 रेडियो की सारी प्रक्रिया है तो अ-ब-स-द में कर्मग्रहण की प्रक्रिया है ।



रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 20

## कार्मणवर्गणा और कर्म

कार्मणवर्गणा घर में भी पड़ी हुई है....बाग-बगीचे में भी है....फिल्म थियेट्रों में भी है.....ओलम्पिक ग्राउण्डों में भी अर्थात् विश्व की ऐसी कोई जगह नहीं बची जहाँ इसका अस्तित्व न हो....सर्वत्र व्याप्त है.....और इस कार्मणवर्गणा को आत्मा मिथ्यात्व आदि कर्मबन्धन के कारणों से ग्रहण कर कर्मरूप बना लेती है। यह हकीकत हम पिछले प्रकरण में रेडियो यंत्र के उदाहरण से अच्छी तरह समझ चुके हैं।

यहाँ एक प्रश्न सभी के मन में सहज ही उठा होगा यह कार्मणवर्गणा किस चिड़िया का नाम है ? इसका स्वरूप क्या है ?

### पुद्गल की वर्गणा

हम अपनी इन दो आँखों के द्वारा जो कुछ देखते हैं.....कानों के द्वारा जो भी सुनते हैं.....नाक द्वारा सूँघते हैं.....जीभ के द्वारा रसास्वादन करते हैं.....हाथ-पाँव आदि से छूते हैं.....वह सब कुछ पुद्गलास्तिकाय है। पेन-टेबल, अच्छे-बुरे शब्द-गीत, अत्तर-सेंट, रोटी-हलुवा-रसगुल्ला-समोसा, उनलप गादी आदि सभी के सभी पुद्गलास्तिकाय है।

अरे, आपका यह शरीर भी पुद्गलास्तिकाय है। हड्डी, पसली, खून, टट्टी-पैशाब सब कुछ पुद्गलास्तिकाय है। इसके सिवाय Bomb, H-Bomb, स्कडास्त्र, पेट्रीयेट, Mig Fighter टैंकर भी पुद्गलास्तिकाय है। जम्बो जेट, प्लेन, ट्रेन, मारुति, हीरो होंडा, हुंडाई, इंडिका आदि भी पुद्गलास्तिकाय है....या संक्षेप में कहे तो

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /21

इस दुनिया में जितने भी परमाणु के जथ्थे रूप स्कंध हैं....या उन स्कंधों से बनी कोई भी चीज है, वह सब पुद्गलास्तिकाय है.....परमाणु भी पुद्गल ही है।

पुद्गलास्तिकाय का संक्षिप्त नाम पुद्गल है। 'पूरनात् गलनाच्च पुद्गलम्' अर्थात् जिसका पूरण=जुड़ने से वृद्धि-संपूर्ति और गलन=बिछुड़ने से विनाश होता हो...हास होता हो...ऐसा जिसका स्वभाव हो, वह पुद्गल कहलाता है।

आज के युग में अणुविज्ञान काफी विकसित हुआ है....ऐसा जोर-शोर से कहा जा रहा है।

वैज्ञानिक कहते हैं कि पानी की एक बूंद में 10,000,000,000, 000,000,000 (एक के ऊपर 19 बिंदियाँ) जितने अणु रहे हुए हैं....

\* जर्मन वैज्ञानिक सर एन्ड्रूज कहते हैं कि 29 ग्राम पानी के मोलेक्यूलस (स्कंध) गिनने हो तो....तीन अरब लोग मिनट के तीन सौ की रफ्तार से यदि चालीस लाख वर्ष तक गिनते रहें तो गिने जायेंगे अर्थात् उतने मोलेक्यूलस (स्कंध) 29 ग्राम पानी में हैं।

\* आलपिन के सिरे के बराबर के बर्फ के टुकड़े में 1,000,000,000,000,000 (एक के ऊपर पन्द्रह बिन्दियाँ) जितने एटम्स-अणु हैं।

\* एक घन इंच वायु में 442400,000,000,000,000,000 (4424 के ऊपर सत्रह बिन्दियाँ) जितने स्कंध हैं।

\* एक बार हम श्वास लेते हैं उतने वायु में

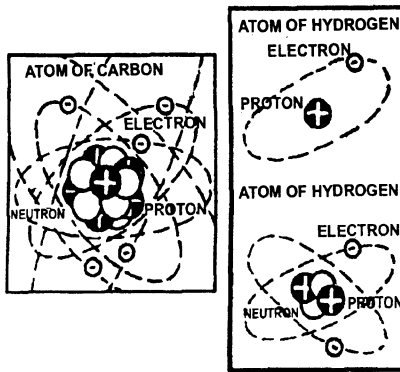
रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /22

10,000,000,000,000,000,000 (एक के ऊपर बाईस बिन्दियाँ) जितने कार्बन अणु होते हैं।

\* रशियन वैज्ञानिक डॉ. जे. ब्रोनोवस्की ने कहा है-

"The air a man's lungs, at any moment contains 10,000,000,000,000,000,000 ( $10^{22}$ ) atoms..."

जैन-दर्शन आधुनिक विज्ञान से भी ज्यादा गहराई से और अत्यन्त सूक्ष्मता से बताता है कि आज के वैज्ञानिकों के द्वारा स्वीकार किए गए उन एक-एक अणुओं में अनंत परमाणु रहे हुए हैं।



## जैन-दर्शन का परमाणुवाद

एक जमाना था, जिस वक्त आर्यदेश के मूर्धन्य विद्वान न्याय-दर्शन-वैशेषिक दर्शन के परमाणुवाद से काफी प्रभावित थे। जैन-दर्शन का परमाणुवाद इतना सूक्ष्म था कि वह उनकी पहुँच से परे था। आज का विज्ञान जैन-दर्शन के परमाणुवाद का लोहा मान रहा है....उसे अत्यन्त अहोभाव से देख रहा है।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 23



न्याय-वैशेषिकादि दर्शनों की मान्यता थी कि मिट्टी के परमाणु मिट्टी के ही रहेंगे....पानी के परमाणु पानी के ही और हवा के परमाणु हवा के ही.... ।

जब की जैन दर्शनकारों ने आज से ढाई हजार साल पहले और उससे भी पूर्व असंख्यात वर्षों से....अनगिनत काल से इसी बात की बराबर पुष्टि की है कि जैसे मिट्टी एक है और उसके आप कई रूप बना सकते हैं....मटके-मटकियाँ-शकोरे, वैसे ही परमाणु तो सभी पुद्गलास्तिकाय के ही है....कभी वे मिट्टी का रूप धारण करते हैं तो कभी-कभार वे ही परमाणु पानी के रूप में या हवा के रूप में भी पाये जा सकते हैं.... ।

आज का विज्ञान कहता है....  $H_2O=Water$  पानी का मतलब है, दो गैसों का सम्मिश्रण यानि हवा से पानी बन सकता है ।

पानी को पुनः गैस बनाया जा सकता है.... इस तरह अब तो विज्ञान भी यह मानने लगा है.....परमाणुओं के सही मात्रा के विविध मिश्रणों से कई चीजें पैदा की जा सकती है ।

यह तो हुआ जैन-जैनेतर दर्शन के परमाणुवाद का समीक्षण । अब हम परमाणु की सही व्याख्या के आधार पर जैन-दर्शन और विज्ञान के परमाणुवाद की निष्पक्ष 'शॉर्ट एण्ड स्वीट' समीक्षा प्रस्तुत करेंगे ।

## परमाणु की व्याख्या-समीक्षा

केवलज्ञानी की दृष्टि से अविभाज्य एक के दो न हो सके वैसे छोटे से छोटे पुद्गल के अंश को परमाणु कहते हैं ।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 24

आधुनिक विज्ञान का माना हुआ अणु ही यदि वास्तविक अणु माना जाय तो उसके विभाजन कैसे हो सकते हैं ? आज के अणु के तो खुद वैज्ञानिकों ने ही विभाजन कर बताये हैं। उन्होंने अणु के कई टुकड़े ढूँढ निकाले...उसमें प्रोटोन, इलेक्ट्रोन, न्यूट्रोन मुख्य हैं।

**उदाहरण-** हाइड्रोजन के अणु में एक प्रोटोन, एक न्यूट्रोन और उसकी परिधि में चारों ओर घूमता हुआ एक इलेक्ट्रोन है। हिलियम के अणु में दो प्रोटोन, दो न्यूट्रोन और दो इलेक्ट्रोन होते हैं, इसी तरह कार्बन के अणु में छह प्रोटोन, छह न्यूट्रोन और छह इलेक्ट्रोन होते हैं।

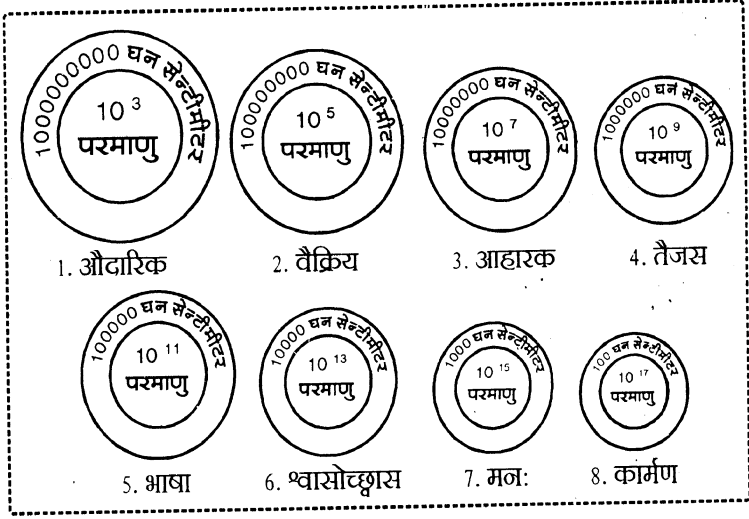
आधुनिक अणु को हम व्यावहारिक परमाणु के रूप से पहचान सकते हैं, चूँकि यह वास्तव परमाणु नहीं, परमाणु का जथ्था स्कंध है।

जैन-दर्शन ने परमाणु की जो व्याख्या की है, वैसे दो परमाणु जब जुड़ते हैं तब द्विप्रदेशी स्कंध उत्पन्न होता है। जब तीन जुड़ते हैं तब त्रिप्रदेशी, चार जुड़ते हैं तब चतुष्प्रदेशी.....इसी तरह आगे बढ़कर अनंत परमाणु जुड़ते हैं तब अनंत प्रदेशी स्कंध पैदा होता है।

## 1. औदारिक वर्गणा

जब अनंत परमाणु परस्पर जुड़ते हैं तब उसे औदारिक वर्गणा कही जाती है। मनुष्य और तिर्यच (पशु-पक्षी आदि) के शरीर औदारिक वर्गणा से बनते हैं, प्रतिपल अपने इस शरीर में नई औदारिक वर्गणा प्रवेश करती है और कितनी ही पुरानी औदारिक वर्गणाएँ शरीर से अलग होती जाती है।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /25



## 2. वैक्रियवर्गणा

औदारिक वर्गणा से अनंत गुने अधिक परमाणु जुड़ते हैं तब वैक्रियवर्गणा बनती है। उदाहरण के तौर पर....यदि औदारिक वर्गणा में 1000 परमाणु होते हैं तो उससे अनंत = 100 अतः वैक्रियवर्गणा में  $1000 \times 100 = 10^5$  परमाणु होते हैं।  $10 \times 10 \times 10 \times 10 \times 10 = 100000$

उपर्युक्त वर्गणा और आगे कही जाने वाली वर्गणाओं की विशेषता यह है कि ज्यों-ज्यों उत्तरोत्तर एक-दूसरे की तुलना में परमाणु अनंत गुने बढ़ते जायेंगे, त्यों-त्यों उनका क्षेत्र-घेराव असंख्यात गुण हीन बनता जायेगा।

ढेर सारी रूई को दबाकर जैसे उसका क्षेत्र-घेराव घटा दिया जाता है, वैसे ही यहाँ पर भी परमाणु तो बढ़ते जायेंगे, मगर घेराव घटता जायेगा।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /26

अतः औदारिकवर्गणा से वैक्रियवर्गणा असंख्यात-गुणहीन क्षेत्र वाली होती है, इसी तरह आगे की वर्गणाओं में भी समझ लेना। कल्पना से असंख्यात = 10, औदारिकवर्गणा 1,000,000,000 घन सेन्टीमीटर वाली है तो फिर वैक्रियवर्गणा का क्षेत्र कितना होगा ? औदारिकवर्गणा की संख्या को असंख्यात = 10 से भाग (Divide) दीजिये, जवाब आ जायेगा.... 1,00,000,000 घन सेन्टीमीटर क्षेत्र होता है, आगे की वर्गणाओं में भी यही तरीका अपनाना चाहिये। **उपयोग** : देव और नरक के जीवों का शरीर वैक्रिय वर्गणा से बनता है।

### 3. आहारक वर्गणा

वैक्रियवर्गणा से आहारकवर्गणा में अनंतगुने परमाणु होते हैं और वैक्रियवर्गणा से उसके क्षेत्र का घेराव असंख्यातगुणहीन होता है। जैसे कि वैक्रियवर्गणा  $10^5 \times 100$  (अनन्त) =  $10^7$  परमाणु होते हैं और वैक्रियवर्गणा  $10^6 \div 10 = 10^7$  घन सेन्टीमीटर्स क्षेत्र का घेराव।

**उपयोग-** चौदहपूर्व के ज्ञानी भगवंतों को जब किसी शंका का समाधान करना हो अथवा तीर्थकर परमात्मा की ऋद्धि देखनी हो, तब वे एक हाथ लंबा आहारकशरीर इसी आहारवर्गणा से बनाते हैं। यह शरीर सर्वावयव संपन्न होता है और पहाड़ों को भेद कर अपने लक्ष्य की ओर जाने की इसकी क्षमता होती है।

### 4. तैजसवर्गणा

आहारकवर्गणा से अनंतगुने परमाणु जुड़ते हैं, तब तैजसवर्गणा बनती है  $10^7 \times 100 = 10^9$  परमाणु और क्षेत्र  $10^7 \div 10 = 10^6$  घन सेन्टीमीटर।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /27

**उपयोग-** इस वर्गणा से तैजस शरीर बनता है, जिससे अपने शरीर में गर्मी आदि रहती है और खाया हुआ अन्न पचता है। अर्थात् पाचन तंत्र (Digestion System) इस शरीर के बिना नहीं हो सकता है।

## 5. भाषा वर्गणा

तैजस वर्गणा से भाषा वर्गणा में अनंतगुने परमाणु होते हैं और उसका क्षेत्र तैजसवर्गणा से असंख्यातगुण हीन होता है  $10^9 \times 100 = 10^{11}$  परमाणु  $10^6 \div 10 = 10^5$  घन सेंटीमीटर क्षेत्र।

**उपयोग-** हम जब बोलते हैं तब हमारी आत्मा कुछ प्रक्रिया करती है, सर्वप्रथम भाषापर्याप्ति (पर्याप्ति=एक विशेष प्रकार की आत्मिक शक्ति ये छः होती है आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास, भाषा, वमन इनमें पाँचवीं भाषा पर्याप्ति मिट्टी, पानी, आग, हवा और वनस्पति नामक एकेन्द्रिय जीवों को छोड़कर सभी जीवों में रहती है) के बलबूते हमारी आत्मा भाषावर्गणा के पुद्गलों को ग्रहण करती है और वचन योग नामक योग को काम में लगाकर उस भाषा वर्गणा को भाषा रूप में परावर्तित करती है। यही भाषा आप और हम सुन पाते हैं।

## 6. श्वासोच्छ्वासवर्गणा

भाषा वर्गणा से इसमें परमाणु अनंतगुने होते हैं और क्षेत्र होता है - असंख्यात गुण हीन।

$10^{11} \times 100 = 10^{13}$  परमाणु और  $10^5 \div 10 = 10^4$  घन सेंटीमीटर क्षेत्र।

**उपयोग-** जब हम सांस लेकर छोड़ते हैं उस वक्त इसी श्वासोच्छ्वास वर्गणा को लेकर हमारी आत्मा सांस बनाती है।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /28

## 7. मनोवर्गणा

श्वसोच्छ्वासवर्गणा से मनोवर्गणा में परमाणु अनंतगुने होते हैं और क्षेत्र असंख्यातगुण हीन ।

$10^{13} \times 100 = 10^{15}$  परमाणु और  $10^4 \div 10 = 10^3$  घन सेंटीमीटर क्षेत्र ।

**उपयोग-** जब हम किसी भी XYZ बात का विचार करते हैं...तब हमारी आत्मा इन्हीं मनोवर्गणा के पुद्गलों को लेकर 'मन' रूप से परावर्तित करती है ।

## 8. कार्मणवर्गणा

मनोवर्गणा से कार्मणवर्गणा में अनंतगुने परमाणु होते हैं, असंख्यात गुणहीन क्षेत्र होता है ।

$10^{15} \times 100 = 10^{17}$  परमाणु और  $10^3 \div 10 = 10^2$  घन सेंटीमीटर क्षेत्र ।

**उपयोग-** मिथ्यात्व आदि कारणों से अपनी आत्मा कार्मणवर्गणा को ग्रहण कर कर्म रूप बनाती है ।

वर्गणाओं का विवेचन समाप्त हुआ । अब हम 'कर्म' के विविध आयामों को सरसरी नजरों से देखेंगे ।

## कर्म

कर्म के आठ भेद हैं - ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय - ये चारों घातिकर्म कहलाते हैं ।

**घातिकर्म-** जो कर्म आत्मा के मूलभूत गुण जैसे कि ज्ञान, दर्शन वीतरागभाव और अनंतशक्ति का घात करते हैं....उसे घातिकर्म कहते हैं ।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /29

शेष चार वेदनीय, आयुष्य, नाम और गोत्र नामक कर्म अघाति कहलाते हैं। चूँकि ये मूलगुणों का नाश नहीं करते हैं।

घातिकर्मों में भी सबसे खतरनाक कर्म है मोहनीय कर्म। चूँकि वही तो हमें क्रोध करवाता है, मान करवाता है, हँसाता है और रूलाता भी है। जिस प्रकार बहुरुपिया नाट्यकलाकार हमें अपनी कला के बाहुपाश में जकड़ देता है...जिससे कभी-हम भी खलनायक-विलेन को देखकर क्रोध से धुँआ-पूँआ हो जाते हैं...तो कभी किसी की हास्योक्ति या सार्थक व्यंग्य पर हँसकर लोट-पोट हो जाते हैं...और कभी-कभार सीन इतना करुण हो पड़ता है कि हम बरबस रो उठते हैं...!

राजा भर्तृहरि को देखकर लोग हिमालय की ओर चल पड़े....और अभी-अभी तो 'एक दूजे के लिए' देखकर कितने ही नौजवान आत्महत्या कर बैठे....रेल की पटरियों के नीचे कट गये...साइनेड पॉइजन खाकर मर गये...बेचारे निर्देशक को तो स्वप्न में भी ख्याल नहीं था कि लोग इस तरह दृश्यों को सच मान लेंगे.....हीरों के हर दिन तीन शो देखने वाली नेपाल की उस शादीशुदा युवती की हालत चिंताजनक बन पड़ी थी, क्योंकि वह सचमुच ही जेकीश्राफ को अपना हीरो मानने लगी थी....!

निर्देशकों में और बहुरुपियों में जैसे सभा को वश करने की ताकत है वैसे ही इस मोहनीय कर्म की ताकत भी गजब है, चूँकि यह कर्म आत्मा को मनचाहे रूप से नचाता है, रूलाता है और हँसाता है।

## दर्जी और बहुरुपिया

बहुत ही छोटा देहाती गाँव था। बहुरुपिया अपनी पूरी मंडली

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 30

के साथ आया रामलीला करने का विचार था। एक ड्रेस कम पड़ गई। सोचा....खैर, कोई बात नहीं....यदि किसी दर्जी का सहकार मिल जाय। इधर-उधर तलाश की तो पता चला पूरे गाँव में एक ही दर्जी है। बहुरुपिया सीधा उसके पास पहुँच गया। 'भैया ! आज रात को रामलीला करनी है, इसलिये मेहरबानी कर इस ड्रेस को यदि आप तुरन्त तैयार कर देते हो तो...' दर्जी सुबह-शाम सिलाई करता रहता था, फिर भी काम पूरा नहीं होता था। काम के बोझ से वह टेन्शन में था, अतः कुछ अटशंट बक गया। बहुरुपिया का माथा ठनका। दोनों के बीच बात अड़ गई। बहुरुपिये ने आवेश में कह दिया 'देख लेना मैं बहुरुपिया हूँ, सबक ऐसा सिखाऊँगा कि जिन्दगी भर बच्चू याद करेगा कि सेर के ऊपर सवा सेर भी होता है।'

यह सुनना था कि हमेंशा हिमालय के बर्फ जैसे रहने वाले दर्जी के दिमाग में भी क्रोध रूपी लावा उबलने लगा....उसका खून खौल उठा और उसने स्पष्ट शब्दों में सुना दिया 'जा.... जा अबे ! तू मुझे क्या कर सकता है....? यह मेरा गाँव है.... तू क्या...तेरी औकात क्या ? क्या तू मुझे गाँव से बाहर निकाल देगा, जो इतनी डाँट-डपट कर रहा है ?'

बहुरुपिये ने आवेश में मूछों पर ताव दे कर कह दिया.... 'यदि मैं तुझे गाँव के बाहर न निकाल दूँ तो मैं बहुरुपिया नहीं...!' ऐसा कहकर वह बाहर निकल गया और सीधा अपने डेरे-तंबू पर पहुँचा। बहुरुपिये ने अपनी मंडली को बुलाकर कहा 'दोस्तों ! रामलीला तो हमने बहुत बार की है और भी करते ही रहेंगे... मगर, आज रात को लीक से परे हटकर कुछ नया कर दिखाने की मंशा है..... रामलीला के बदले आज दर्जीलीला करेंगे। बात सभी को जँच गई।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /31



आवश्यक तैयारी कर दी और सभी ने अपने-अपने रोल समझ लिये।

शाम के समय बहुरूपिये की कला देखने के लिए अपार जनमेदिनी आ गई। गाँव के लोगों के साथ दर्जी भी अपनी पत्नी के साथ आ पहुँचा। सभी की नजर मंच पर बन्द पड़े पर्दे पर थी, यकायक पर्दा खुला.... तो ऐसा देखा... अरे, देखना क्या था ? लोग हँस-हँस कर दोहरे हो गये....चूँकि गाँव के दर्जी और उसकी पत्नी की कार्बन कॉपी मंच पर थी.....वैसा ही हुलिया.....वो ही एक्टिंग....वैसा ही स्वर.....हाथ में कैंची.....आँखों पर चश्मा.....कान पर पेंसिल.....गले में मापने की टेप.....! 'सूत्रधार ने जाहिर किया- 'आज हम रामलीला के बदले दर्जीलीला करना चाहेंगे....'

दर्जी लीला थोड़ी आगे चली.....मजा ऐसा आया कि लोग ठहाका लगाते पेट पकड़कर हँसते रहे और उधर दर्जी और उसकी पत्नी मन ही मन जलभून कर राख हो रहे थे....दर्जी की पत्नी को खूब गुस्सा आया....उसने अपने पति से कहा- चलो ! यहाँ से चलते हैं, अब ज्यादा सहन नहीं होता। लोग भी कैसे हैं? बिल्कुल बेशर्म !, हँसते जा रहे हैं और हमारी ओर जानबूझ कर देखते भी जा रहे हैं...! दर्जी को भी गुस्सा तो आ ही रहा था, वह जैसे ही उठा, मंच से बहुरूपिया बोला- 'अरे दर्जीभाई ! अभी तो खेल बहुत बाकी है, आप बीच में ही अधूरा छोड़ कर जा रहे हैं, यह अच्छा नहीं है....! बैठिये..बैठिये !' इससे दर्जी का गुस्सा और भी अत्यधिक बढ़ गया। उसका बोयलर फट गया....जैसे उस पर किसी ने एटमबम फेंका हो....। दर्जी बोला- 'मैं तो अभी चला....कौन माई का लाल है जो मुझे रोक सकता है ? इतना भी

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /32

नहीं मैं ऐसे लोगों के साथ भी नहीं रहना चाहता, जो अपने साथी के अपमान को हँस-हँस कर सह रहे हो। इसके साथ मुझे तुम्हारा बेकार नाटक भी नहीं देखना....' बहुरुपिये का तीर तो ठीक निशाने पर लगा था। जैसे ही दर्जी ने नाटक से पलायन किया, नाटक में उपस्थित लोग सकते में आ गये....पशोपेश में पड़ गये...रंग में भंग पड़ गया.....सारा मजा ही किर-किरा हो गया।

गाँव के मुखिया और अन्य लोगों ने बहुरुपिये से कहा कि 'देखो भैया ! दर्जी महोदय तो सचमुच की बुरा मान गये हैं....वे तो रूठ कर जा रहे हैं....ये तो हमारे गाँव के एकमात्र दर्जी हैं ! कैसे भी करो भाई और आप दर्जी को मना लाओ....'

गाँव के समझदार लोगों ने भी दर्जी को मनाने का बहुत प्रयत्न किया, मगर उसने तो अपना निर्णय ले लिया था। सभी के मना करने के बावजूद भी उसने बैलगाड़ी भरी और गाँव छोड़कर जाने लगा। इतने में बहुरुपिया बीच रास्ते में आ गया और बोला- 'क्यों भाई ! देख ली न बंदे की ताकत! गाँव को छोड़कर जाना पड़ा न? जाओ-जाओ...जल्दी जाओ, पीछे मुड़कर भी मत देखना !'

यह सुनकर दर्जी का अभिमान सातवें आसमान पर पहुँच गया और बोला- 'जा...जा....अबे बहुरुपिये के बच्चे ! तू कौन होता है मुझे गाँव से बाहर निकालने वाला ? मैं तो यहीं रहूँगा...तेरी क्या औकात कि मुझे बाहर निकाल सको ?' ऐसा कहकर उसने अपनी बैलगाड़ी वापिस गाँव की ओर मोड़ दी।

इस रूपक में जैसे बहुरुपिये ने दर्जी में क्रोध और अहंकार पैदा किया....वैसे ही यह मोहनीय कर्म भी कभी क्रोध करवाता है,

रे कर्म तेरी गति न्यायी...!! /33

तो कभी काम...कभी मान....तो कभी माया.....! कभी शोक....तो कभी हास्य....जी में आये वैसे मानो नचाता है। अतः सर्वप्रथम तो सुरंग खोद कर इस कर्म को चकनाचूर कर देना चाहिये। इसकी धज़ियाँ उड़ानी चाहिये।

इस मोहनीय कर्म ने तो विश्व के मांघाताओं को भी भिखारी-सी हालत में पटक दिया। उन्हें अपना लट्टू बना दिया...और फिर दुर्गति में भेज दिया।

‘कम्माण मोहणिञ्जं’ मोहनीयकर्म को जीतना अत्यन्त ही दुष्कर है...एवरेस्ट की चोटी पर पाँव रखना सरल है, परन्तु मोहनीय कर्म को वश करना कठिन है। जब तक उस पर विजय प्राप्त नहीं किया जाता तब तक आध्यात्मिक विकास संभव नहीं !। and My और I am something के भाव पैदा करने वाला भी यही कर्म है।

मोहनीयकर्म से टक्कर लेकर उसे नेस्तनाबुद कर उस पर संपूर्ण विजय प्राप्त करने वाले झांझरिया ऋषि का जीवन हम सभी के लिये प्रेरणास्पद है।

## झांझरिया ऋषि

प्रतिष्ठानपुर नगर के राजा मकरध्वज का पुत्र राजकुमार मदन ब्रह्म....वैराग्य वासित हो दीक्षा के लिये उत्सुक हो उठा।

धूमधाम से दीक्षा लेकर ज्ञान-ध्यान और तप-संयम-साधना में लीन रहने लगे। मासक्षमणादि तप से अपनी काया को सूखी-लकड़ी जैसा श्याम बना दिया। ग्रामानुग्राम विचरते हुए वे त्रंभावती आए....गोचरी के लिये गाँव में गये।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /34

एक युवा नारी, जिसका पति परदेश गया हुआ था, वह अपने महल के झरोखे में बैठी कामवासना से ओतप्रोत आँखों से इधर-उधर निहार रही थी। उसकी दृष्टि राह में आ रहे मुनि पर पड़ी। अद्भुत रूप और लावण्य को देख उसका विकार भड़क उठा....! उसने अपनी दासी को भेजकर मुनि को गोचरी के बहाने अपने महल में बुलवाया। मुनि सरल भाव से पधारे....वे अनभिज्ञ थे कि इसका मन मैला है और तन उजला है। युवा नारी ने वासना और विकार से भरे शब्दों से दैहिक सुख की याचना की। इस पर मुनि ने युवती को सावधान करते हुए दृढ़ता पूर्वक उसके प्रस्ताव को ठुकरा दिया।

‘खा न सकूँ तो क्या हुआ ! ढोल तो सकूँ’ इस दुर्बुद्धि से ग्रसित वह युवती मुनि को कलंक लगाने के उद्देश्य से उनके पाँवों में बेल की भाँति लिपट गई।

अपने संयम और ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिए मुनि वहाँ से भागने लगे तो युवती ने उनके पाँव में अपनी झाँझर डाल दी और जोर-जोर से चिल्लाने लगी ‘बचाओ...बचाओ ! पकड़ो... पकड़ो !! इस पापी दुराचारी को....इसने मुझ अबला पर बलात्कार करने की कोशिश की !’

मुनि ने अपने संयम की रक्षा को महत्व देते हुए उस झाँझर को निकालने में अपना समय खराब नहीं किया....लोग अंतशंत बोलने लगे....भयंकर निन्दा करने लगे....देखो-देखो....वेश तो साधु का....और काम कैसा ? मुनि पर थूँकने लगे....मगर मुनि समभाव से सब कुछ सहते रहे....

इधर, राजमहल के झरोखे बैठा राजा सब कुछ देख रहा था। ‘मुनि निर्दोष है’ उसको पता था। मगर छलकपट कर शुद्ध मुनि को

फाँसने और बदनाम करने वाली युवती पर उसे भयंकर घृणा हुई और उसने हुक्म दिया 'जाओ ! इस नीच महिला को सजा के रूप में देशनिकाल दे दो... ।'

लोग तो ढोलक की तरह होते हैं। ढोलक दोनों ओर से बजती हैं। अब सभी लोग मुनि की प्रशंसा करने लगे। मगर, नाम तो बदल ही गया....मुनि मदनब्रह्म से झांझरिया ऋषि बन गये। मुनि के संयम की पवित्रता जगजाहिर हो गई.....। काजल की कोटड़ी में फाँसे मगर एक छोटा-सा भी काला दाग लगने नहीं दिया.....कमाल है !

इस घटना को बीते कुछ समय हुआ था कि...

एक बार कांचनपुर गाँव जहाँ मुनि की बहन ब्याही हुई थी....वहाँ मुनि गोचरी के लिये गये और उधर राजमहल के हवादार झरोखे में बैठे राजा-रानी नगर की चर्या देख रहे थे। रानी की नजर मुनि पर टिकी और उसने अपने सगे भाई को पहचान लिया। भाई पर उसका अपार प्रेम उमड़ पड़ा। जिससे उसकी आँखें अश्रु से लबालब हो उठी और अश्रुधारा अविरल बहने लगी। राजा ने जब यह दृश्य देखा तो उसने उसका दूसरा अर्थ निकाला कि 'रानी, एक संन्यासी को देखकर आँसू बहा रही है, इसका मतलब निश्चित ही यह संन्यासी इसका पूर्व का यार होगा। अब यह देख-सोच कर आँसू बहा रही है कि यह तो संन्यासी बन गया....अब मुझे इससे दैहिक सुख कैसे मिलेगा ?'

राजा ने रानी से इस बारे में कुछ भी पूछा नहीं....सीधे ही राजदरबार में जाकर चंडालों को बुलाकर उन्हें मुनि को मारने का हुक्म दे दिया। 'बिना विचारे जो करे सो तो फिर पछताय ।'

चंडाल तो राजा के आदेश का गुलाम था। मुनि को हाथ-जोड़कर बोला- 'भगवन् ! इस पापी पेट के कारण राजा के हुक्म से आपके गले पर मेरी यह शमशीर चलेगी....आपका अपराध क्या है? मुझे पता नहीं है। मैं आपको छोड़ तो नहीं सकता हूँ मगर, मारने से पहले मैं आपको इतना समय जरूर दे सकता हूँ कि आप अपने इष्टदेव का स्मरण करें।'

समता के सागर झांझरिया ऋषि ने अनशन का पचक्खाण कर लिया और चौरासी लाख जीवायोनि को खमाने लगे.....। राजा का तनिक भी दोष नहीं देखा और कर्म का विचार करने लगे कि मैंने ही पूर्वभवों में कहीं न कहीं ऐसा कर्मबन्ध किया होगा..... जिसके उदय से मुझे यह भुगतना पड़ रहा है। मारा है तो मरना पड़ेगा.....काटा है, तो कटना पड़ेगा....अत एव क्यों नहीं मैं समाधि पूर्वक सहन कर एकान्त कर्म निर्जरा करूँ ? राजा को दोषी मानकर उस पर द्वेष या तिरस्कार-फिटकार करके क्यों अपनी आत्मा को कर्म से कलुषित करूँ?

इस प्रकार कर्म का चिंतन करते-करते झांझरिया मुनि धर्म ध्यान से शुक्ल ध्यान पर आरूढ़ हुए और उसी क्षण चांडाल ने अपनी तलवार चला दी। मुनि की गर्दन कटकर नीचे गिरने से पूर्व ही मुनि ने अपनी कमाई कर ली और साधना पूरी कर दी। घाति कर्मों का क्षय कर उन्होंने केवलज्ञान को प्राप्त कर लिया....और शेष चार अघाति कर्मों को आयोजिका करण के माध्यम से आयुष्य कर्म के साथ सम बनाकर शैलशी अवस्था पर आरूढ़ होकर संपूर्ण कर्मों का क्षय किया और गर्दन कट कर नीचे गिरते ही झांझरिया मुनि मोक्ष में चले गये...!

गर्दन कटी....लहू बहने लगा....पास में पड़े हुए रजोहरण

रे कर्म तेरी गति न्यासी...!! /37

और मुँहपत्ति आदि कपड़े खून से लथपथ हो गये। रजोहरण को मांस का टुकड़ा समझकर एक पक्षी उसे उठाकर ले गया। आकाश में उड़ते-उड़ते ज्योंहि रानी के महल का प्रांगण आया...संयोगवशात् उसकी पकड़ कमजोर हुई और वह रजोहरण धम्म से नीचे गिर गया। रानी ने रजोहरण को देखते ही पहचान लिया कि अरे ! यह तो मेरे भाई का रजोहरण है ! यह खून सना कैसे ? पता लगवाया तो पता चला कि यह खून और किसी ने नहीं स्वयं राजा ने करवाया है...। रानी शोकाकुल होकर वैराग्यवासित बन गई और उसने खाना-पीना छोड़ दिया और अनशन स्वीकार लिया।

राजा को जब सच्ची बात समझ में आई तो उसे अपार पश्चात्ताप हुआ....परन्तु 'अब पछताये क्या होत है जब चिड़िया चुग गई खेत'। राजा गाँव के बाहर गया। मुनि के प्राण पंखेरु तो कभी के उड़ चुके थे...। राजा मुनि के शव के पास बैठकर करुण विलाप करते हुए क्षमा माँगने लगा। उसे इसकी चिंता नहीं थी कि लोग मुझे क्या कहेंगे, लोग मुझे कैसा ढोंगी और बेवकूफ समझेंगे....। वह सोचने लगा कि 'मुझे लोगों की परवाह नहीं....मुझे उनका सर्टिफिकेट नहीं चाहिये....पाप मैंने किया है तो पश्चात्ताप मुझे ही करना होगा....इसी शरीर को मैंने कटवाया है तो इसी के सामने मुझे माफी माँगनी होगी।' वह बार-बार उठकर मुनि-शरीर के पाँवों में गिरकर अपनी आँखों से बहती अश्रुधारा की गंगा-जमुना से मुनि के पाँवों को प्रक्षालित करने लगा।

ओह ! रानी के कारण मेरे अपराध का मुझे भान हो गया....ऐसे मैंने इस भव में और भवोंभव में न जाने कितने अपराध किये होंगे? जिनकी मुझे जानकारी भी नहीं है ! मिच्छामि दुक्कडं...मिच्छामि दुक्कडं.... क्षमा करो....क्षमा करो...' यह बोलते-बोलते राजा भवोभव

के वैर खमाते-खमाते शुभ अध्यवसाय की श्रेणी पर चढ़ने लगा और शुक्ल-ध्यान पर आरूढ़ होकर घातिकर्मों का संपूर्ण नाश करते हुए क्षमा के आधार पर केवलज्ञान को प्राप्त हुआ। यह है प्रायश्चित्त की निर्मल गंगा में स्नान करने का फल ! यह है पापों को धोने की सही प्रक्रिया !

उपर्युक्त दृष्टांत में हमने देखा कि कर्म के चिंतन से अपार कष्ट और प्रतिकूल दशा में भी झांझरिया मुनि अपने आप को सुंदर समाधि में रख पाये, चूँकि कर्म के विपाक विचय नाम का धर्म-ध्यान आता है। धर्म-ध्यान से क्षपकश्रेणि पर चढ़ा जाता है। तदन्तर जीव को शुक्लध्यान आता है और उससे फिर केवलज्ञान की प्राप्ति होती है और केवलज्ञान होने के बाद शेष चार अघातिकर्म रहते हैं। उनका भी नाश होने पर जीव का मोक्ष हो जाता है। किसी भी बिचौलिये प्रदेश का स्पर्श न कर एक ही समय में जीव सिद्धशिला के प्रदेश में पहुँच जाता है।

कितना अद्भुत माहात्म्य है कर्मवाद का !

अब हम कर्मबंध और उसके भेद-प्रभेदों का आगे विचार करेंगे।



रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /39



## कर्मबंध के चार प्रकार

आठ वर्गणाओं का विचार हम कर चुके हैं। इसलिये हमें यह ख्याल में आ रहा है कि कर्मणवर्गणा विश्व के कोने-कोने में पड़ी हुई है। उसमें सुख-दुःख देने की....ज्ञान आदि गुण रोकने की शक्ति उत्पन्न होती है।

### कर्मबंध

कर्मणवर्गणा को जब अपनी आत्मा मिथ्यात्व आदि कारणों से ग्रहण कर अपने साथ एकमेक बनाती है.....अर्थात् कर्मणवर्गणा और आत्मा के बीच क्षीर-नीर (दूध-पानी) या लोहा और आग की तरह एकमेकता खड़ी होती है, उसे कर्मबंध कहते हैं।

कर्मबंध के चार विभाग हैं - (1) प्रकृतिबंध (2) स्थितिबंध (3) रसबंध और (4) प्रदेशबंध।

### 1. प्रकृतिबंध

जब आत्मा के साथ कर्मणवर्गणा मिथ्यात्व आदि कारणों से जुड़ती है तब उस कर्मणवर्गणा में आठ अथवा सात भिन्न-भिन्न स्वभाव उत्पन्न होते हैं। जब आयुष्य का बंध होता हो तब आठ स्वभाव उत्पन्न होते हैं और जब आयुष्य का बंध न पड़ता हो तब सात स्वभाव उत्पन्न होते हैं।

आशय यह है कि कर्मणवर्गणा के कितने ही स्कंधों में ज्ञान रोकने का स्वभाव, कितने ही में दर्शन रोकने का स्वभाव, कुछेक में सुख-दुःख देने का स्वभाव, तो कुछेक में क्रोधादि करवाकर वीतराग

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /40

भाव को रोकने का स्वभाव, कितनों में नीच-उच्च कुलों में उत्पन्न करने का स्वभाव...और कितनों में बल आदि में विघ्न करने का स्वभाव उत्पन्न होता है। उसे प्रकृतिबंध कहते हैं।

**दृष्टांत-** जैसे सोंठ में पित्त करने का स्वभाव है तो गुड़ में कफ करने का स्वभाव है, परन्तु गुड़ का पाया बनाकर उसमें सोंठ मिलाकर यदि गोलियाँ बना दी जाय, तो उसमें वायु नाश करने का स्वभाव उत्पन्न हो जाता है।

मोतीचूर के लड्डू में वायु करने का स्वभाव उत्पन्न होता है...दूध में जामन डालने से जड़ता उत्पन्न करने का स्वभाव उत्पन्न होता है...उसी तरह आत्मा के साथ जुड़ रहे कर्मणवर्गणा के जथ्थों में ज्ञानादि रोकने का स्वभाव उत्पन्न हो जाता है।

असत्कल्पना से हम इस तरह आपको समझा सकते हैं...मानो कि हमने कर्मणवर्गणा के आठ हजार स्कंध ग्रहण किये तो उसमें से एक हजार स्कंध में ज्ञानावरण स्वभाव उत्पन्न होता है...दूसरे हजार में दर्शनावरण स्वभाव उत्पन्न होगा...इसी तरह हर एक-एक हजार में अलग-अलग स्वभाव उत्पन्न हो जाता है।

यद्यपि सूक्ष्मदृष्टि से देखा जाय तो स्कंधों में जो स्वभाव उत्पन्न होते हैं, वे विशेषाधिक ही होते हैं...किसी जथ्थे में कम तो किसी में ज्यादा। फिर भी यहाँ पर तो स्थूलदृष्टि से असत्कल्पना को माध्यम बना कर समझाया है।

वे जथ्थे अनुक्रम से (1) ज्ञानावरण (2) दर्शनावरण (3) वेदनीय (4) मोहनीय (5) आयुष्य (6) नाम (7) गोत्र और (8) अन्तरायकर्म - कहलाते हैं। इनके अवांतर भेद मतिज्ञानावरण आदि होते हैं।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /41

प्रश्न - मोक्ष में गये हुए जीवों को कर्मबंध होता है या नहीं?

उत्तर - मोक्ष में गए हुए जीवों को कर्मबंध नहीं होता है। यद्यपि वहाँ पर जीव भी है और कामर्णवर्गणा भी है...फिर भी वहाँ उस जीव में कर्मबंध के पाँचों कारण या उनमें से किसी एक का भी नामोनिशान नहीं है, अतः वहाँ पर जीव कर्मों से लिप्त बनता नहीं है।

प्रश्न - कर्मबंध के लिये मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग ये पाँचों कारण आवश्यक है क्या ?

उत्तर - जरूरी नहीं...! जिन आत्माओं को चार घाति कर्मों के संपूर्ण क्षय से केवलज्ञान की प्राप्ति हुई है, वे तेरहवें सयोगि गुणस्थान पर होते हैं....उनका जो कर्मबंध होता है वह सिर्फ योग से ही। व्याख्यान देना....विहार करना आदि शुभ योग ही है, अतः उन्हें शातावेदनीय कर्म का ही बंध होता है।

दसवें गुणस्थानक पर कषाय और योग का अस्तित्व होता है, अतः वेदनीय आदि छः कर्मों का बंध होता है। उसी प्रकार नीचे-नीचे के गुणस्थानकों में यथासंभव मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग के निमित्त से कर्मबन्धन होता है।

प्रश्न - मोक्ष में आत्माओं को योग = मन, वचन एवं काया की क्रिया तो होती नहीं, फिर वे हमेशा कैसे रहते हैं ?

उत्तर - वे हमेशा एक-सी अवस्था में रहते हैं। उनकी सादि जिसका प्रारम्भ हो और अनंत = जिसका कभी नाश न हो, वैसी स्थिति होती है....इसीलिये तो परमात्मा के आगे हम गद्गद् होकर गाते हैं।

२े कर्म तेरी गति न्यारी...!! /42

‘रिझ्यो साहेब ! संग न परिहरे भांगे सादि अनंत ।’

हे प्रभो ! यदि आप हमारे पर खुश हो जाओ तो हमें आपका सादि अनंत स्थिति का संयोग मिल जाय... । ऐसा संयोग जो कभी टूटे ही नहीं.... ।

अंतिम भव के शरीर की ऊँचाई, चौड़ाई और मोटाई जितनी होती है.....उसमें रहे हुए आत्मप्रदेशों का संकोच मोक्ष में जाने के बाद इस कद्र हो जाता है कि सिर्फ 2/3 भाग ही वहाँ शेष रहता है ।

दृष्टांत के तौर पर...जीव के शरीर की 5<sub>1/4</sub> फुट की ऊँचाई हो....1<sub>1/2</sub> फुट की चौड़ाई हो.....और 7<sup>1/2</sup> ईंच की मोटाई हो तो मोक्ष में जाने पर आत्मप्रदेशों का संकोच इस तरह होगा 3<sub>1/2</sub> फुट की ऊँचाई, एक फुट चौड़ाई और पाँच ईंच की मोटाई, चूँकि आत्मप्रदेशों के समूह में आत्मा में (आत्मा में) संकोच एवं विकास का स्वभाव माना गया है । अतः शरीर में जो खाली भाग है (नाक आदि में) उनमें 1/3 भाग के प्रदेश अपने आप सेट हो जाते हैं ।

जैसे कि संसारी अवस्था में भी आत्मा के साथ यही घटित होता है.....चींटी मरकर आदमी बनी....तो चींटी के आत्मप्रदेश मनुष्य के शरीर के अनुसार अपने आपको फैला देते हैं....मनुष्य मर कर चींटी का भव धारण करता है, तब उन्हीं अपने आत्मप्रदेशों को चींटी की देह के प्रमाण में संकोचित कर देता है ।

प्रकाश को यदि होल में लेकर जायेंगे तो वह होल में फैल जायेगा....वो ही दीया....वो ही बाती और उसका वो ही प्रकाश....यदि एक छोटी-सी कोठरी में ले जाया जाय तो वह उसमें अपना संकोच कर समाविष्ट हो जायेगा....और यदि एक छोटे-से-छोटे मटके में उस प्रकाश को रख देंगे तो उसमें भी उसका समावेश हो जायेगा... ।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 43

## मुक्त आत्माओं की मोक्षावस्था

जिनका मोक्ष खड़े-खड़े कायोत्सर्ग मुद्रा में हुआ है.... उनके आत्मप्रदेश खड़े-खड़े ही सदा काल के लिये रहेंगे। जो बैठे-बैठे मोक्ष में गये... उनके आत्मप्रदेश बैठे-बैठे ही रहेंगे।

सीधे लेट कर जिन्होंने अनशन किया है और मोक्ष में चले गये हैं..... उनके आत्मप्रदेश वहाँ अनंत काल तक लेटे-लेटे ही रहेंगे।

उसमें भी ऊपर से सभी आत्माएँ समश्रेणि में ही रहती है.... नीचे से सभी विषम।

## गुब्बारे की कल्पना

उदाहरण के तौर पर हाइड्रोजन गैस से भरकर अलग-अलग साइज और आकृति के गुब्बारे (Balloons) बन्द कमरे में उड़ा दिये जाय तो वे सभी छत को छू जायेंगे.... नीचे से विषमता साफ नजर आयेगी.... कोई गोल.... कोई लम्बा.... आदि-आदि।

## तूंबड़े की कल्पना

सरोवर की तह में तूंबड़ा पड़ा हुआ था.... कुछ दिनों के बाद अपने आप ही ऊपर आ गया। अनुभवी व्यक्तियों को पूछने से पता चला..... तूंबड़े का स्वभाव तो तैरने का ही है.... तो फिर डूबा क्यों? तो कहते हैं कि उस पर मिट्टी की मोटी परत जम गई थी अतः उसमें भारीपन आ गया था....! ज्योंहि मिट्टी दूर हुई, तूंबड़ा अपने आप ऊपर उठ आया....।

ठीक उसी प्रकार..... हमारे जीव रूपी तूंबड़े का स्वभाव तो ऊपर उठने का ही है.... मगर कर्मरूपी मिट्टी से वह संसार-सरोवर

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 44

के तल में जा बैठा है....जैसे ही वह मिट्टी दूर होती है....जीव रूपी तूंबड़ा अपने आप ऊपर की ओर उठने लगता है और सिद्धशिला पर जा पहुँचता है। लोकाकाश की अंतिम रेखा तक चला जाता है....उससे ऊपर वह जा नहीं सकता, चूँकि अलोकाकाश में गति में सहायक धर्मास्तिकाय नहीं है....। जीव वहीं स्थिर रहता है, क्योंकि कर्म हो तो ही भटकन है....उन जीवों का तो कर्मनाश हो गया है, अतः भटकन भी नहीं होती....।

### सहज प्रश्न

प्रश्न - लोक के अग्रभाग में समश्रेणि से सिद्ध की अनंती आत्माएँ 45 लाख योजन के उस सीमित क्षेत्र में रहते हैं....यह कैसे संभव हो ? आत्माएँ अनंत और रहने के लिये जगह एकदम सीमित ?

उत्तर - आज के युग में ऐसे प्रश्न बेहूदे लगते हैं....चूँकि विज्ञान ने एक प्रयोग-परीक्षण के द्वारा सिद्ध कर बताया है कि एक कमरा जितना लोहा तीन इंच जितनी जगह में समाया जा सकता है....

फिर भी...उपर्युक्त प्रश्न का उत्तर शास्त्रीय ढंग से दिया जा रहा है।

आत्मा जब मोक्ष में होती है, तब वह शरीर रहित होती है....अतः घर्षण आदि का सवाल ही पैदा नहीं होता... इसीलिये अनंत आत्माएँ अपना अलग-अलग अस्तित्व बनाये रखते हैं और एक-दूसरे में एकमेक हो जाते हैं।

उदाहरण के तौर पर....एक कमरे में एक बल्ब जलाते हैं....पूरा कमरा प्रकाश से नहा उठता है....स्वीच ऑन कर दूसरा बल्ब

रे कर्म तेरी गति न्यारी....!! / 45

जलाते हैं.....उसका भी प्रकाश अपना अस्तित्व अलग बनाये रखता है, फिर भी पहले वाले प्रकाश में ही समा जाता है.... । इसी प्रकार पचासों बल्बों का प्रकाश उसी एक छोटे से कमरे में खूब आसानी से समा जाता है....कमरा जगमगा उठता है। सभी का अपना अस्तित्व बकायदा जिन्दा रहता है। चूँकि एक बल्ब बंद होते ही प्रकाश की जगमगाहट में फर्क नजर आता है, फिर भी समूह में हमें उसके भेद का ज्ञान नहीं हो पाता ।

उसी तरह प्रत्येक सिद्ध आत्मा का अलग अस्तित्व तो है ही फिर भी शरीर नहीं होने से अनंतों का समावेश उसी सीमित क्षेत्र में प्रकाश की तरह हो जाता है ।

## 2. स्थितिबंध

आत्मा के साथ कर्मणवर्गणा जुड़ती है और कर्मरूप बनती है...उसी समय उस कर्म की स्थिति भी निश्चित हो जाती है....अर्थात् यदि उन कर्मों के बंध के बाद कोई नई बात न हो जाय (जिससे उस कर्म में किसी प्रकार का परिवर्तन हो) तो वह कर्म उस निश्चित काल तक आत्मा के साथ जुड़ा रहेगा....उसे स्थितिबंध कहते हैं।

**उदाहरण-** भगवान महावीर के जीव ने तीसरे मरीची के भव में कुल मद से नीच गोत्र को बाँधा। वह कर्म सत्ताईसवें भव तक यानि एक कोटा-कोटि सागरोपम तक उनकी आत्मा के साथ रहा।

जिस कर्म की जितनी स्थिति बाँधी हो, उतने काल तक वह कर्म आत्मा के साथ जुड़ा रहता है।

**जघन्य-उत्कृष्ट स्थिति-** ज्ञानावरण, दर्शनावरणीय, वेदनीय और अंतराय कर्म का ज्यादा से ज्यादा स्थितिबंध तीस

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /46

कोटा-कोटी सागरोपम....और कम से कम वेदनीयकर्म का बारह मुहूर्त और शेष तीन का अन्तर्मुहूर्त होता है....मोहनीयकर्म का ज्यादा से ज्यादा स्थितिबंध सित्तर कोटा-कोटी सागरोपम और कम से कम अन्तर्मुहूर्त होता है।

नाम और गोत्रकर्म की उत्कृष्ट स्थिति बीस कोकोसा (कोटाकोटी सागरोपम) और जघन्य से आठ मुहूर्त।

आयुष्य कर्म की उत्कृष्ट स्थिति तैंतीस सागरोपम और जघन्य एक अन्तर्मुहूर्त होती है।

दृष्टांत- कोई लड्डू पन्द्रह दिन तक बिगड़ता नहीं है....कोई बीस दिन तक, तो कोई महीने तक भी नहीं बिगड़ता है।

इस प्रकार जितने समय तक आत्मा के साथ कर्म दूध-शक्कर की तरह एकमेक होकर रहे उसे स्थिति बंध कहते हैं।

### 3. रसबंध

आत्मा के साथ जब कार्मणवर्गणा जुड़ती है....तब उसमें कम या ज्यादा फल देने की शक्ति उत्पन्न होती है, उसे रसबंध कहते हैं। जैसे लड्डू में कम या ज्यादा शक्कर होती है, तो उसमें कम या ज्यादा मिठास होती है।

शुभ कर्म का रस शुभ फल देता है। वह ईख के रस के समान है। अशुभ कर्म का रस अशुभ फल देता है। वह नीम के रस के समान है।

1. एक ठाणिया रस बँध - ईख अथवा नीम के स्वाभाविक रस के समान कर्म का एक ठाणिया रस बँध होता है।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 47



(एक ठाणिया- जैसे शक्कर की चासनी बनाते हैं, तब एक तार की, दो तार की....तीन तार की बनाई जाती है....तरल... मध्यम...और घट्ट....एक ठाणिया चासनी का मतलब है एक तार की....बिल्कुल तरल...पानी जैसी)

2. दो ठाणिया रसबंध- ईख अथवा नीम का रस उबालने के बाद गाढ़ा होकर आधा हो जाता है....पहिले से थोड़ा घट्ट। उसी प्रकार कर्म का दो ठाणिया रसबंध होता है। पहले से इस रस में अधिक मात्रा में फल देने की शक्ति होती है।

3. तीन ठाणिया रसबंध- ईख अथवा नीम के रस को खूब उबालने पर रस का जो 1/3 भाग शेष रहता है...उसे तीन ठाणिया का रस कहते हैं। इसी तरह कर्म का तीन ठाणिया रसबंध होता है। इसमें दो ठाणिया से कई गुना अधिक फल देने की शक्ति होती है।

4. चार ठाणिया रसबंध- ईख अथवा नीम के रस को कढ़ाई में अत्यन्त ताप देकर उबालने पर जो 1/4 अत्यन्त गाढ़ा-घट्ट रस बचता है, उसे चार ठाणिया रस कहते हैं। कर्म का भी रसबंध ऐसा घट्ट और गाढ़ा जब होता है, तब उसे चार ठाणिया रसबंध कहते हैं। इसमें सब से ज्यादा फल देने की ताकत है।

उदाहरण- आम बात है....आपने कई बार महसूस किया होगा.....सिरदर्द - हल्का-सा सिरदर्द ! किसी ने पूछ लिया- भैया ! कैसे हो ? तो आप तपाक से बोल उठेंगे, 'अजी....आनंद ही आनंद है....हल्का-सा सिरदर्द है' और आप अपने कार्य-कलाप में मस्त हो जायेंगे। अशातावेदनीयकर्म के उदय से सिरदर्द हुआ, मगर रस की तीव्रता नहीं थी....अतः आपको कोई खास दिक्कत नहीं आई।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 48

अब एक दूसरा उदाहरण....एक बार अहमदाबाद के वी. एस. हॉस्पिटल में कारणवश जाना हुआ। जनरल वार्ड की बेड पर एक आदमी....सिर पटक-पटक कर चिल्ला रहा था... 'हे भगवान ! मैं मर गया...मर गया।' पास में पुत्र-पुत्री-पत्नी आदि पारिवारिक एवं स्नेही स्वजन रो-रो कर हमदर्दी जताते हुए उसे आश्वासन दे रहे थे। दृश्य करुण था....लगा यह आदमी अभी मर जायेगा.... चूँकि अपार वेदना के भाव उसके मुख पर छलक रहे थे। मैंने पूछा- क्या तकलीफ है ? परिवारजन बोले 'सिरदर्द है, मैं ताज़ुब था। दो घंटे के बाद दर्द गायब हो गया। आदमी पूर्ण स्वस्थ था। था तो मात्र सिरदर्द ही न....मगर छक्के छुड़वा दिये....क्योंकि अशांतावदेनीयकर्म का रसबंध तीव्र था।

#### 4. प्रदेशबंध

आत्मा के साथ कर्मणवर्गणा के स्कंधों का समूह जितना जुड़ता है...उसे प्रदेशबंध कहते हैं। जैसे कि कोई लड़्डू पाँच सौ ग्राम का होता है, तो कोई चार सौ ग्राम....कोई ढाई सौ ग्राम का। ठीक उसी प्रकार कर्मणवर्गणा के स्कंधों को जीव कम-ज्यादा प्रमाण में ग्रहण करता है, उसे प्रदेशबंध कहते हैं।

#### प्रकृतिबंध-प्रदेशबंध के कारण

'जोगा पयडीपएसा' योग से प्रकृतिबंध और प्रदेश बंध होता है। योग = मन, वचन और काया की प्रवृत्ति। यदि योग ज्यादा हो तो कर्मणवर्गणा के स्कंध ज्यादा बंधते हैं और कम हो तो कम बंधते हैं।

#### स्थितिबंध और रसबंध के कारण

'ठिई अणुभागं कसायाओ' स्थितिबंध और रसबंध कषाय

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 49

से होता है। आत्मा में कषाय का प्रमाण जितना ज्यादा होगा अर्थात् संक्लेशवाली आत्मा हो तो वह शुभ तीन आयुष्य सिवाय शुभ या अशुभ कर्मों की स्थिति बंध ज्यादा करती है।

परन्तु रसबंध का यह नियम है कि संक्लेश ज्यादा हो तो जीव अशुभकर्म का रस ज्यादा बाँधता है और विशुद्धि ज्यादा हो तो शुभ कर्म का रस ज्यादा बाँधता है। विशुद्धि कम हो तो शुभ कर्म का रस कम बाँधता है।

## पोपा बाई का राज नहीं चलेगा !

जिन कर्मों को हमने किया है...बाँधा है.....उनका शुभाशुभ फल हमें ही भुगतना पड़ेगा....तभी तो जोर-शोर से पुकार-पुकार कर सुनाया जाता है। 'बंध समय चित्त चेतीये रे उदये शो संताप...?' चूँकि यह कोई पोपा बाई का राज नहीं कि पाप करे कोई और भुगते कोई।

कर्मसत्ता बलवान है। वह किसी को छोड़ती नहीं है। पोपाबाई के राज्य में अँधेरी नगरी के गंडूराजा के राज्य की तरह एक ही भाव में सब कुछ मिलता था। 'अँधेर नगरी गंडू राजा, टके सेर भाजी टके सेर खाजा' जितना आटा लाओ उतनी मनपसन्द मिठाई ले जाओ। यह देख गुरु ने चले को कहा- 'जहाँ गुण-अवगुण की परीक्षा नहीं वैसे राज्य में रहना कतई उचित नहीं, चल अभी का अभी।' चले को भी जीभ ने दास बना लिया था। गुरु आज्ञा भंग करके भी वह वहीं पर रहने लगा।

एक दिन हुआ यों कि एक चोर सेठ के घर की दीवार को तोड़कर अंदर घुसा, चोरी करके बाहर निकल ही रहा था कि दीवार ढह गई और वह मर गया। चोर की बुद्धी माँ सीधी पहुँची पोपाबाई

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 50

के राजदरबार में... शिकायत की कि 'मेरा बेटा मर गया, इसलिये मैं न्याय चाहती हूँ !'

पोपाबाई ने क्रमशः सेठ, मेमार, गार बनानेवाला, सेठ की लड़की, बाबाजी और अंत में जमाई को बुलवाया और कहा 'देखिये जमाईराज ! यह बात और है कि आप मेरे जमाईराज हैं, मगर आप अपराधी है...अतः आपको फाँसी का हुक्म होता है।'

जमाईराज तो सकपका गया...!

'कौन-सा अपराध ?'

'आप राजपथ पर घोड़े को तेजी से दौड़ा रहे थे...चपेट में न आ जाय, इसलिये बाबाजी जान बचाकर भागे....उनकी लंगोटी गिर गई....उन्हें ध्यान न रहा....सेठ की जवान लड़की यह दृश्य देख शर्म के मारे एकदम से रूमझूम करती घर के भीतर घुस आई....गारा वाले का ध्यान उस लड़की की ओर गया....इसलिये पानी ज्यादा डल गया और गारा पतला बना.....इसलिये मेमार से दीवार की राजगीरी कच्ची हुई....सेठ की दीवार कच्ची हुई...ढह गई...और उधर इसी कारण बुढ़िया ने अपना कमाऊ (?) बेटा गँवा दिया.....इस घटना का मूल है आपका बेफिकराई से राजपथ पर घोड़ा दौड़ाना ! इसीलिये आपको फाँसी पर चढ़ाया जाता है। चूँकि मेरे राज्य का कानून है जीव के बदले जीव जायेगा !!!'

दामाद ने सोच लिया....'चलो....स्वीकार कर ले...दया आयेगी तो मुझ पर ही कि बिटिया विधवा हो जायेगी। अतः सजा रद्द कर दो....' इस विचार से दामाद ने कहा- 'ठीक है मैं अपना अपराध कबूल करता हूँ....मुझे फाँसी पर लटका दीजिये !'

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 51

दामाद का गला पतला था....अतः फाँसी का फंदा फिट नहीं हो रहा था। पोपाबाई ने जल्लादों को हुक्म दिया कि किसी मोटे-तगड़े आदमी को खोज निकालो। खा-पीकर मस्त बना हुआ चेला हाथ आया। पोपाबाई ने उससे उसकी अन्तिम इच्छा पूछी। उसने सोच-विचार कर अपने गुरु से मिलने की इच्छा प्रकट की। गुरुजी मिले तो वह उनके पाँवों में गिरकर माफी माँगने लगा....खूब रोया....बचने का उपाय पूछा। तब गुरुजी ने उसके कान में उपाय बताया।

फाँसी का टाड़म हुआ और गुरुजी भी आ पहुँचे। गुरुजी कहते हैं....अब श्रेष्ठ मुहूर्त आया है, मरने वाला सीधा वैकुण्ठ में जाता है, इसीलिये मुझे फाँसी पर लटकाओ...चेला कहता है- 'इसीलिये तो मैं भी कहता हूँ, मुझे फाँसी पर लटकाओ' गुरुजी की यह युक्ति थी।

पोपाबाई ने कहा कि 'आप तो दोनों महात्मा हैं....साधक हैं....आपको तो वैसे ही वैकुण्ठ मिल जायेगा.... Seat Reserved है....अतः मेरे जैसी पापिनी को चढ़ने दीजिये ताकि सीधा वैकुण्ठ मिल जाये।'

इस तरह पोपाबाई की रामकथा एक ट्रेजेडी बन गई। पोपाबाई को फाँसी पर चढ़ना पड़ा।

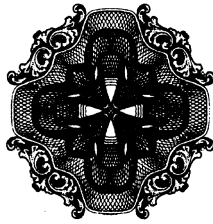
जीवात्मा कई बार हँसते-हँसते भी मन, वचन और काया से चिकने कर्मों को बाँधती है। आजकल तो लाफिंग क्लबें चलने लगी हैं। हँसते-हँसते बाँधे हुए कर्म आठ-आठ आँसू गिराने पर भी नहीं छूटते हैं। 'कडाण कम्माण ण अत्थि मोक्खो' किये हुए कर्म भुगते बिना मुक्त नहीं हो सकते हैं।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 52

चाहे तीर्थंकर परमात्मा का जीव हो या छः खंड का मालिक चक्रवर्ती.....राजा हो या रंक.....सभी के लिये कर्म भुगतने का न्याय समान है। इसीलिये सभी आत्माओं को कर्मबंध के वक्त सविशेष ध्यान रखना चाहिये। जागृत रहना चाहिये।

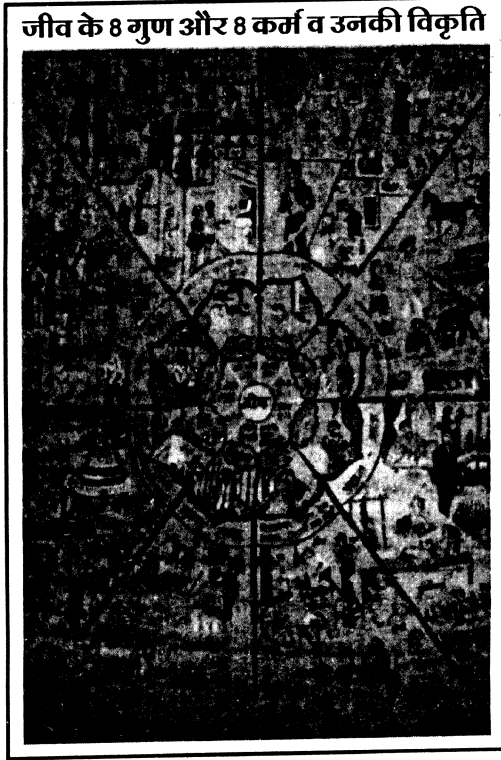
गुनाह किया किसी दूसरे ने और फल भुगते कोई और ! यानि पोपाबाई को सजा मिली ! पोपाबाई के राज में ऐसी गैर बात हो सकती है, मगर कर्म सिद्धांत में ऐसी अंधाधुंधी अर्थहीन बात नहीं हो सकती। जिसने पाप किया, उसे भुगतना ही पड़ेगा।

कर्म की प्रकृतियाँ और उससे होने वाली विकृतियों की विवेचना अगले प्रकरण में की जायेगी।



रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /53

# मूलकर्म के आठ भेद और उपमाएँ



कर्म की प्रकृतियों के विषय में आज हम विस्तार से विचारणा-विवेचना करेंगे।

कर्म की मुख्य प्रकृतियाँ आठ होती हैं-

## 1. ज्ञानावरण कर्म

आत्मा का मुख्य गुण ज्ञान है। वह अनंत है। जगत के अनंत पदार्थों को प्रकाशित करने में वह समर्थ है। फिर भी हमारा आज

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 54

का ज्ञान इतना संकुचित हो गया है... पीठ पीछे क्या हो रहा है, उसका भी हमें पता नहीं ! कारण ? ज्ञानावरण कर्म का आवरण ! जैसे सारी दुनिया को प्रकाशित करने का सामर्थ्य वाला सूर्य..... बादल से ढक जाता है, तब सभी पदार्थों को पूर्णरूप से प्रकाशित नहीं कर सकता है....ठीक उसी तरह, अनंत वस्तुओं को दर्शाने वाला आत्मा में पड़ा हुआ ज्ञान भी जब ज्ञानावरण कर्म रूपी बादलों से ढक जाता है, तब जीव अनंत वस्तुओं का ज्ञान नहीं कर पाता है।

शास्त्रकार भगवंतों ने ज्ञानावरण को पट्टी की उपमा दी है। जैसे किसी व्यक्ति की आँखों पर ज्यादा पड़वाली कपड़े की पट्टी बाँध दी जाती है...तो आँखों के रहते भी वह अँधा है....क्योंकि वह कुछ भी देख नहीं पाता।

उसी तरह हम भी अनंतज्ञान से संपन्न हैं फिर भी जगत के सभी पदार्थों को देख नहीं पाते हैं।

ज्यों-ज्यों आँखों के ऊपर की पट्टी खुल जाती है, त्यों-त्यों दृश्य स्पष्ट होते जाते हैं। ठीक उसी तरह ज्यों-ज्यों हमारा ज्ञानावरण कर्म हटता जायेगा, त्यों-त्यों हमारा ज्ञान बढ़ता जायेगा। यकीन कीजिये....एक दिन संपूर्ण ज्ञानावरण कर्म नष्ट हो जायेगा....तब हमें सारे विश्व का ज्ञान हो जायेगा।

ज्ञानावरणकर्म-प्रकृति के उदय से अज्ञानरूपी विकृति पैदा होती है।

## मासतुष मुनि

एक मुनिराज ने उत्तराध्ययन के तीन अध्ययन कंठस्थ कर लिये। परन्तु ज्ञानावरण कर्म का अचानक उदय आने से चौथा

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 55



अध्ययन वे रट नहीं पा रहे थे। लाख कोशिश करने के बावजूद भी वे बिल्कुल असफल रहे। तब गुरुभगवंत ने कहा- खैर, याद नहीं होता है तो कोई बात नहीं....सिर्फ इतना कंठस्थ कर लो... 'मा रुष, मा तुष' अर्थात् किसी पर रोष-द्वेष न कर और किसी पर तोष-राग न कर (भौतिक सुख आदि की प्राप्ति में खुश भी न बन और अप्राप्ति में रोष भी मत रख !)

परन्तु उन वृद्धमुनि को तो ये भी शब्द सही याद न रहे। ऊफ ! ज्ञानावरण कर्म का उदय कितना भयंकर है ! पास वाले याद दिलाते तो भी भूल जाते - 'मा रुष मा तुष' के बदले 'मास तुस' ही रटते थे। गुरु के ऊपर अपार श्रद्धा थी। अतः शुद्ध भाव से यह अशुद्ध रूप उन्होंने बारह साल रटा। लोग हँसते भी थे, नाम भी उनका बदल दिया 'मासतुसमुनि'। फिर भी वे क्रोध नहीं करते थे....बल्कि अपार समता रखते थे। रटने में उद्वेग नहीं लाया, बोर नहीं हुए। अतः ज्ञानावरण कर्म कटने लगा। बारह साल के अंत में उन्हें केवलज्ञान प्रगट हुआ।

इसी तरह ज्ञानावरण कर्म का बादल दूर हो जाने पर आत्मा के अंदर पड़ा हुआ केवलज्ञान रूपी सूर्य प्रकट हो जाता है।

## 2. दर्शनावरण कर्म

ज्ञान- वस्तु का विशेष बोध, दर्शन- वस्तु का सामान्य बोध। जैसे कि 'कुछ है' ऐसा आभास होता है, उसे दर्शन कहते हैं और 'यह वृक्ष है....यह मनुष्य हैं' ऐसा विशेष बोध हमें पैदा होता है उसे ज्ञान कहते हैं।

आत्मा का दूसरा गुण अनंतदर्शन है। उसे दर्शनावरण कर्म रोकता है। यह कर्म (Doorkeeper)द्वारपालके समान है। जैसे

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 56

कोई प्रजाजन राजा को देखने का इच्छुक राजद्वार पर जाता है, मगर द्वारपाल उसे वहीं रोक देता है। अंदर घुसने तक नहीं देता। इसी तरह आत्मा का स्वभाव है अनंतदर्शन....। मगर दर्शनावरण उस अनंतदर्शन को रोकता है। इस दर्शनावरणीय कर्म के उदय से नींद...अंधापा आदि विकृतियाँ पैदा होती है।

### 3. वेदनीय कर्म

आत्मा का तीसरा गुण अव्याबाध अनंत सुख है। वेदनीय कर्म के उदय से वह दब जाता है। जीव को इस संसार में कृत्रिम कर्मजन्य सुख और दुःख मिलता है। यह शहद की चुपड़ी हुई तलवार की धार के समान है।

जैसे शहद से लिप्त तलवार की धार को चाटने वाले को महाँगा पड़ जाता है। उस आनंद की भारी कीमत चुकानी पड़ती है, क्योंकि थोड़ी ही देर में चाटने वाले की जीभ धार से कट जाती है, लहलुहान हो जाती है ! तब उसे अत्यन्त दुःखी होना पड़ता है।

ठीक उसी तरह शातावेदनीय कर्म के उदय से सुख तो मिलता है, मगर बाँधा हुआ अशातावेदनीय कर्म ज्योंहि उदय में आता है, त्योंहि दुःख भी भुगतना पड़ता है।

इस वेदनीय कर्म के उदय से आत्मा में भौतिक सुख-दुःख की अनुभूति रूप विकृति पैदा होती है।

### 4. मोहनीय कर्म

The King of the Karmas.....Commander in Chief of all the Karmas.

कर्माँ का राजा और सब कर्माँ का सेनाधिपति यह कर्म सबसे

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 57

खतरनाक माना जाता है। मोहनीयकर्म जब तक संपूर्ण नष्ट नहीं होता तब तक केवलज्ञान नहीं होता है।

आत्मा का चौथा गुण वीतरागता है। उसे रोकनेवाला कर्म मोहनीय कर्म है। इसे दारु की उपमा दी गई है। शराब पीने वाला इंसान शराब के नशे में चूर होकर अपना विवेक खो बैठता है...। कुत्ते की पेशाब को शरबत Lemon Soda कोको कोला या थम्स अप मानकर पी लेता है...गटर में भी पड़ा रहता है...कोई ठौर न ठिकाना....जहाँ-तहाँ पड़ा रहता है, दुःख भुगतता है। उसी तरह यह आत्मा भी मोहनीय कर्म के उदय से अपनी वीतराग अवस्था को भूल बैठती है।

मोह की शराब से धुत्त होकर जीव भौतिक सुखों के पीछे दिवाना बनकर अनेक प्रकार के मिथ्यात्व, राग, द्वेष, अविरति, हास्य, शोक, रति, अरति, क्रोध, मान, माया, लोभ का आत्मा भोग बनती है। इस प्रकार मोहनीय कर्म की मिथ्यात्व आदि विकृतियाँ होती हैं।

## 5. आयुष्य कर्म

आत्मा का पाँचवाँ गुण अक्षयस्थिति है, अर्थात् आत्मा एक स्थान से दूसरे स्थान पर नहीं जाती है। ऐसा आत्मा का मूल स्वभाव है। परंतु आयुष्य कर्म उसे एक स्थान पर टिकने नहीं देता। नियत समय तक ही अमुक स्थान पर वह आत्मा रुक सकती है। उसके बाद उसे किसी अन्य जगह पर जाना ही पड़ता है। वहाँ पर भी आयुष्य कर्म उसे अमुक निश्चित समय तक ही रहने देता है।

आयुष्य कर्म हथकड़ी (Cufflinks) के समान है। जैसे

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 58

हथकड़ी और बेड़ी में बँधा हुआ व्यक्ति नियत समय तक कारागृह में रहता है और कहीं इधर-उधर टहलने के बहाने जा-आ नहीं सकता है, उसी तरह आयुष्यकर्म का उदय चल रहा हो तब तक आत्मा अन्य भव में या मोक्ष में जा नहीं सकती है।

आयुष्य कर्म के उदय से जन्म, मृत्यु आदि विकृतियाँ पैदा होती हैं। जीव को अमुक-अमुक स्थानों पर रहने की इच्छा न होने पर भी आयुष्य कर्म बलवान है अर्थात् आयुष्य कर्म का उदय होने से जब तक स्थिति-आयु पूर्ण न हो तब तक अनिच्छा से भी रहना ही पड़ता है....

और अपार सुख-समृद्धि के स्थानों को छोड़ने की इच्छा न भी हो तो भी आयुष्य पूर्ण होने पर छोड़ना ही पड़ता है।

देवलोक का देव मरना नहीं चाहता है, मगर आयुष्य पूरा होने पर मरना ही पड़ता है।

नरक का जीव पल-पल मौत की इच्छा करता है तो भी आयुष्य कर्म पूरा न हो तब तक वह मर नहीं सकता है। सातवीं नरक का आयुष्य तेत्रीश सागरोपम होता है। एक पल्योपम में असंख्यात वर्ष होते हैं। इतना लंबा आयुष्य सातवीं नरक का होता है। जिस वक्त नारकी उत्पन्न होता है...तभी से वह उस अपार वेदना से छुटकारा पाने के लिये मौत की झंखना करता है। मगर मौत उससे कोसों दूर रहती है...क्योंकि आयुष्यकर्म पूरा न हो तब तक वह वहाँ से दूसरी गति में जा नहीं सकता.....

ऊपरोक्त हकीकत हम शास्त्रोक्त नागश्री ब्राह्मणी के दृष्टांत से समझेंगे।

## नागश्री ब्राह्मणी

एक ब्राह्मण के तीन पुत्र थे। उसमें से एक की शादी नागश्री नामक ब्राह्मण कन्या के साथ हुई। तीनों पुत्रों की शादी हो गई। अतः पुत्रवधुओं में झगड़ा-टंटा न हो इसलिये एक व्यवस्था बनाई गई। तदनुसार बारी-बारी से एक दिन का सारा काम एक बहू को करना, ऐसा निश्चय किया गया। नागश्री की बारी आई, उसने तुमड़े की सब्जी बनाई। परन्तु सब्जी बनाने से पूर्व वह उसे चखना भूल गई। सब्जी बनाकर फिर चखा... थू...थू करना पड़ा, क्योंकि सब्जी एकदम कड़वी थी। नागश्री अत्यन्त चिंतित हुई। इज्जत का सवाल था। नाक कटने की बारी आ गई। मानो साँप ने छछूंदर खा लिया, 'निगले तो मरें...और उगले तो अंधा हो जाय....।'

सब्जी को बाहर फेंके तो इज्जत जाती है और घर में रखे तो दूसरी बहूओं के बीच नीचा देखना पड़ता है।

इस दुविधा में फँसी ही थी कि एकाएक 'धर्मलाभ' के साथ मासक्षमण के महातपस्वी धर्मरुचि अनगार ने घर में माधुकरी-गोचरी के लिए प्रवेश किया। उस वक्त नागश्री को एक कुबुद्धि सूझी और उसने सारी की सारी सब्जी मुनिश्री के पात्र में 'ना-ना' कहते उड़ेल दी।

मुनिश्री ने गुरुभगवंत को गोचरी बताई। आहार देखते ही चार ज्ञान के धारक गुरु भगवंत ने कह दिया 'यह जहरीले तुंबे की तरकारी है....अतः इसे जयणा पूर्वक परठ कर वोसिरा दो...। हे श्रमण ! तुम दया के ज्ञाता हो....अतः जीवहिंसा न हो, इसका ख्याल रखना....यह सब्जी आहार करने योग्य नहीं है, अतः दूसरा आहार लाकर संयम का निर्वाह करना....वह ज्यादा उचित होगा।'

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 60

‘तहत्ति’ कहकर गुरुभगवंत के वचन को स्वीकार किया और जंगल में एकान्त और निर्जन स्थल पर सब्जी परठने के लिए पहुँचे। स्थल को निर्जीव देखकर परीक्षण के लिए एक बूंद की पारिष्ठापनिका की। देखते-देखते हजारों चींटियाँ इधर-उधर खुशबू के कारण दौड़ आई.....और उस बूंद का स्वाद लेते ही प्राण गँवा दिये....इस भयंकर हिंसा को देखकर मुनिश्री का अन्तःकरण द्रवित हो उठा और विचार करने लगे कि ‘यदि एक ही बूंद से हजारों चींटियाँ मर जाती हैं तो पूरे पात्र की पारिष्ठापनिका करूँगा.... तो....तो....ओह ! बेहतर है मैं अपने ही पेट में इसे परठ दूँ....।’

मुनि भगवंत संथारा कर वहीं बैठ गये....चार शरण लेकर जहरीली सब्जी का पूरा पात्र वापर लिया। जहर के फैलते ही पूरे शरीर में भयंकर दाह उत्पन्न हुआ....नसों खींचने लगी, अग्नि ज्वालाएँ मानो अंग-प्रत्यंग से उठने लगी...अपार वेदना ने अपना अड्डा जमा लिया। मुनिश्री समभाव में रहते हुए हँसते-हँसते सहते रहे। आयुष्य पूर्ण कर सर्वार्थसिद्ध नामक अनुत्तर विमान में तेत्रीश सागरोपम के आयुष्यवाले देव बने।

नागश्री मर कर छट्टी नरक में गई। वहाँ उसे बाईस सागरोपम का अनपवर्तनीय आयुष्य मिला। छट्टी नरक में वह भयंकर वेदनाओं के कारण पल-पल मौत की इच्छा करती है, मगर मौत उसे नहीं मिलती।

## आत्महत्या

कितने ही लोग क्रोध अथवा अहंकार से आत्महत्या (Suicide) करते हैं। आत्महत्या करने वाली आत्मा दुर्गति में जाती

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 61

है। नरक आदि गतियों में उत्पन्न होती हैं और वहाँ उसे अनगिनत काल तक दुःख सहना पड़ता है।

उदाहरण के तौर पर...एस. एस. सी. की परीक्षा में कोई फेल हो जाता है, तो वह ट्रेन की पटरी पर सोकर या कांकरिया तालाब में गिरकर आत्महत्या कर लेता है। यदि वह अशुभविचार और लेश्या में नरक जैसी दुर्गति में चला जाता है.....तो वहाँ कितने समय तक उसे दुःख भुगतना पड़ेगा.....? इस बात का वह विचार तक नहीं करता है। कदाचित् वह व्यक्ति यहाँ जीवित रहता तो दूसरे वर्ष पास भी हो जाता....मरने के बाद तो पास होने की बात ही नहीं रहती है न ! अतः आत्महत्या तो क्या कभी उसका विचार भी नहीं करना चाहिये। हत्या पाप है तो आत्महत्या महापाप। क्योंकि इस पाप का पश्चाताप करने का कोई मौका ही नहीं रहता।

आत्महत्या करने वाले को अंत समय में नसीब से अच्छा विचार आ भी जाय तो भी भूत-प्रेत जैसी व्यंतर देवों की तुच्छ योनि मिलती है, परन्तु ऐसे जीव भी बहुत कम होते हैं।

**प्रश्न - भूत-प्रेत-डायन आदि क्या है ?**

**उत्तर -** जो जीव व्यंतर योनि में देवरूप से उत्पन्न होते हैं...वे कौतुक के लिये किसी को डराते हैं.....हँसाते हैं...रूलाते हैं....दूसरे लोगों के शरीर में प्रवेश करते हैं....अपने अनुकूल लोगों को सहाय भी करते हैं...और अपने से प्रतिकूल हो उन्हें तंग भी करते हैं।

**प्रश्न - भूत-प्रेत लगना क्या सच है ?**

**उत्तर -** कितने ही लोगों में व्यंतरदेवों का उपद्रव वास्तविक

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 62

भी होता है। जैसे कि अर्जुनमाली के शरीर में देव प्रवेश कर गया था। मगर आजकल कई ढोंग-ढकोसले धर्तींग भी होते हैं अर्थात् मस्तिष्क की कोरी उपज अवास्तविक बातें भी होती हैं।

## मातृभक्त युवक

राजस्थान के ग्राम्यप्रदेश में यह घटना घटित हुई थी। पिता का अकाल अवसान हो गया। माँ ने अत्यन्त कष्ट पूर्वक बच्चे को बड़ा किया। इधर माँ का वात्सल्य अपार था तो उधर पुत्र की भक्ति भी अमाप थी। युवावस्था में आते ही शादी हुई। बहू जरा तेज तर्रार थी। उसका मिजाज अलग था।

वृद्ध माता के उत्तम संस्कारों को वह पचा नहीं सकी और अपनी मनमानी न होती देख, उसने एक तरकीब खोज निकाली, क्योंकि मातृभक्त पति उसकी एक नहीं सुनता था।

रविवार का दिन था। बहू घूमने लगी....हूँsss....जीव लेकर जाऊँगी....जीव लेकर जाऊँगी....मेरी मंशा पूरी करो...’ युवक ने सोचा कि शायद कोई डायन लग गई लगती है। उसने तुरंत उसकी अंगुली पकड़ी और पूछा- ‘बोल तू कौन है ? और किसलिये आई है ? बहू जवाब में प्रश्नों के उत्तर देते हुए आवेश में हिलते हुए बोली.... ‘तुम्हारी माँ का सिर मुंडाओ....मुँह पर कालिख पोतो....और घूँघट निकलवाकर मेरे सामने नचाओ...में अगले रविवार वापस आऊँगी, यदि उस वक्त मेरी मंशा पूरी नहीं की तो जीव लेकर जाऊँगी...जीव लेकर जाऊँगी...’ यूँ कहते हुए वह बेहोश होने का ढोंग कर गिर पड़ी।

मातृभक्त युवक समझ गया कि दाल में काला है...यह सब मेरी माँ को अपमानित करने का स्वाँग है....! ‘ईट का जवाब पत्थर

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 63



से' जैसों को तैसा (Tit For Tat) मेरे जीते जी मेरी पूज्य माताजी का अपमान हो जाय, ऐसा हो ही नहीं सकता।' युवक ने मन ही मन योजना बना डाली। पास वाले गाँव में ही ससुराल था। युवक भोर से पहिले ही अपने ससुराल पहुँच गया। अपना-सा मुँह लिये गुमसुम वहाँ पर बैठ गया।

सास ने आवभगत कर पूछा 'बात क्या है जमाईराज ! बताइये तो सही ? सुख-दुःख की बात हमें नहीं बतायेंगे तो और किसे बतायेंगे ? क्योंकि आपके पिताजी का देहांत हो गया है।

सास द्वारा बहुत पूछने पर उसने मुँह नीचे करते हुए बताया कि 'अब आपको क्या कहूँ ? बात ही कुछ ऐसी बनी है, जिसे न कहा जाय न सहा जाय। आपकी बेटी को रविवार के दिन डायन लगी है। डायन कह रही है कि मेरी मंशा पूरी करो वरना मैं जीव लेकर जाऊँगी...'

'अच्छा !' सास तो एकदम घबरा गई, उसकी वह इकलोती बेटी जो थी। बोली- 'क्या है उसकी मंशा ?'

'उसकी मंशा है कि मेरी माँ का सिर मुंडा कर, मुँह पर कालिख पोत कर....घूँघट में मेरे आगे नचाओ तो ही मैं छोड़ूँगी, वरना जीव लेकर जाऊँगी।' युवक ने बेहद दर्दीली आवाज में बात सुनाई। तीर निशाने पर लगा। सासु ने कहा- अरे ! जमाईराज ! इतनी-सी बात में आप इतने व्यथित हो गये...? यह तो मेरी बेटी को बचाने की ही तो बात है, मेरी लाइली यदि बच जाती है तो मैं सब कुछ करने को तैयार हूँ...जाइये, अब आप घोड़े बेचकर सो जाइये....मैं रविवार को ठीक समय पर पहुँच जाऊँगी।'

रविवार आया और बहू ने तो अपनी एक्टिंग चालू कर दी।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 64

माँ को कमरे में बिठा दी। सास को तैयार कर दी। बुढ़िया को देखकर उसने कहा- 'नाचो....नाचो ! नहीं तो जीव लेकर जाऊँगी' बुढ़िया ने सोचा- जमाई की बात तो सही है और वह नाचने लगी- थैया...थैया...था..... था.....थैया !

यह सब देखकर बहू हर्ष से पागल हो गई और उससे रहा नहीं गया और वह बोल उठी-

**देख बुढ़िया का चाला (एक्टिंग)**

**सिर मूँडा मुँह काला !**

दो बार - तीन बार वह बोल गई।

यह सुनकर मातृभक्त युवक से भी रहा न गया....उसने मूँछ पर ताव देकर तपाकू से ईंट का जवाब पत्थर से दिया...

**देख बंदे की फेरी**

**माँ मेरी कि तेरी !!**

यह सुनकर बहू चौंकी....बेहोश होने की एक्टिंग की और फिर सचेतन होकर बुढ़िया का घूँघट उठा कर देखा....'अरे माँ ! तू यहाँ कहाँ से ? अरे बेटा ! तेरे को ठीक है न ? बाकी सब बातें गौण है।'

बहू बेचारी बहुत ही शर्मिन्दा हुई और अपनी करनी का फल देखकर 'लेने गई पूत, खो आई खसम' जैसी उसकी दुर्दशा हो गई। उसे मन ही मन बहुत पश्चात्ताप हुआ। दोनों माताओं ने उसे समझाया और विनय-विवेक-शांतिपूर्वक जीवन व्यतीत करने की अमूल्य सीख दी।

इस तरह कई जगह अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिये....मान-सम्मान प्राप्त करने के लिये...स्वांग भी रचे जाते हैं। ऐसे दंभी लोगों

रे कर्म तेरी गति न्यासी...!! / 65

के चंगुल में न फँसकर....बातों में न आकर उनसे बचकर चलना चाहिये। कोई कहता है पद्मावती देवी आती है...कोई कहता है अंबिका देवी आती है....कोई कहता है भैरवजी आते हैं.... आदि-आदि। मानो उन देवी-देवताओं को और कोई अन्य कार्य ही नहीं हो। याद रखिये...वास्तविक बहुत कम होते हैं....ज्यादातर लोगों को उल्लू बनाने का धंधा चलता है....भोले लोग फँसे बिना नहीं रहते है..... दस में से एक का काम पुण्यवश अच्छा हो जाता है तो बस....प्रचार का बाजार गर्म हो जाता है....ऐसे धोखेबाजों से हमेशा सावधान रहिये। यदि सच है तो तीर्थरक्षा का काम क्या कम है ?

**प्रश्न - आयुष्यकर्म कब बँधता है ?**

**उत्तर -** देव और नारकी का अगले भव का आयुष्य छः माह की आयु शेष रहने पर बँधता है। पंचेन्द्रिय संज्ञी मनुष्य और तिर्यच की आयु निम्न रूप से बँधती है।

वर्तमान भव की निश्चित आयु को तीन भागों में बाँट दीजिये। उसमें से दो भाग बीत जाने पर शेष एक भाग में अगले भव की आयु बँध सकती है....और यदि उस वक्त ऐसे परिणाम न आये हो तो उस एक भाग को भी तीन भागों में बाँट दीजिये। उनमें से दो भाग बीत जाने पर शेष भाग में आयु बँधती है। यूँ करते-करते अंतिम अन्तर्मुहूर्त में तो आयु बँधेगी ही।

कल्पना से हम देखते हैं तो....किसी व्यक्तिका वर्तमान भव का आयुष्य नब्बे वर्ष का है तो साठ वर्ष बीत जाने पर नये - अगले भव का आयुष्य बँध सकता है। यदि उस समय न बँधे तो शेष तीस वर्ष के दो भाग यानि बीस साल =  $2/3$  बीत जाने पर बँधेगा।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 66

अर्थात् पूरी आयु नब्बे की अपेक्षा से 80 साल बीत जाने पर आयुष्य बँधेगा ।

उस वक्त भी न बँधे तो शेष दस वर्ष के भी दो भाग बीत जाने पर....यूँ करते-करते अंतिम अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर तो अवश्य बँधेगा ही ।

जैन धर्म में दूज, पंचमी, अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा आदि पर्वतिथियों की विशेष महत्ता देखी जाती है । यथाशक्ति तप, जप, ब्रह्मचर्य, दया, दानादि धर्मकृत्यों में प्रवृत्ति देखी जाती है, कारण क्या ? यही कि अगले भव की आयु प्रायः तिथि के दिन बँधती है और चूँकि आयु संपूर्ण जीवन में सिर्फ एक ही बार बँधती है । अतः तदर्थ विशेष जागृति पर जोर दिया जाता है । इस तथ्य को मद्देनजर रखते हुए पर्व-तिथि के दिन विशेष आराधना-साधना करनी चाहिये । जिससे हमारी सद्गति हो । चूँकि आयुष्य बाँधते समय शुभ भाव चल रहे हो तो शुभगति का आयुष्य बँधता है । तिथियाँ भी देखिये ! हर तीसरे दिन आती है ।

**प्रश्न -** उपरोक्त गणित से तो यह लगता है कि आयुष्य का 2/3, 1/3 आदि बातें सिर्फ ज्ञानी ही जान सकते हैं?

**उत्तर -** बिल्कुल सच बात है....तभी तो गौतमस्वामी जैसे चौदहपूर्वधर....बारह अंग के धारक को भगवान महावीर स्वामी कहते हैं.... 'समयं गोयमा ! मा पमायए !' एक समय का भी प्रमाद मत कर... 'खणं जाणाहि पंडिए !' क्षण को समझने वाला ही पंडित है.... । विचार कीजिये, पलक झपकते ही असंख्यात समय निकल जाते हैं....और उधर भगवान कहते हैं...कि एक समय का भी प्रमाद मत कर ! सोचने जैसी बात है, ऐसे एक नहीं हम तो अनेक

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /67

घंटे इधर-उधर की बातों में, गपशप-पंचायती, अखबार पढ़ने, टीवी देखने में.....प्रमाद में गँवा देते हैं....। याद रखिये, जो समय को बरबाद करता है समय उसे बरबाद कर देता है।

हर पल शुभ भाव रखने का एक सरल उपाय ढूँढ निकाला गया है शास्त्रों में। जिसे इस धरती पर सांस लेने वाला हर एक इंसान कर सकता है, वह उपाय है....

गंठसी....वेढसी....मुठ्ठीसी पचक्खाण !!

**गंठसी-** जब तक नवकार गिनने पूर्वक गाँठ खोलू नहीं तब तक अशन आदि (रोटी, पानी, तंबूल, फल आदि) चार आहारों का त्याग यानि अनशन।

**वेढसी-** नवकार गिनने पूर्वक अंगुली में से अंगूठी निकालू नहीं, तब तक चारों आहारों का त्याग।

**मुठ्ठीसी-** नवकार गिनने पूर्वक मुठ्ठी बाँध कर पारूँ नहीं, तब तक मेरा अनशन चारों आहारों का त्याग।

ऐसे पचक्खाण करने से कई आत्माएँ कर्मनिर्जरा करने वाली बनी हैं। पुण्य का उपार्जन करने वाली बनी हैं।

## कपर्दी यक्ष

सिद्धगिरिराज पर आप गये हैं न...? वाघणपोल में प्रवेश कर दायें हाथ पर देखेंगे तो वहाँ कपर्दी यक्ष की स्थापना की गई है। उनका इतिहास बड़ा ही रोचक और रसप्रद है।

आचार्य वज्रस्वामीजी को जंगल में एक जुलाहा मिला। वज्रस्वामीजी ने उसे समझाया कि 'तुमसे तप-त्याग नहीं होता है।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 68

तो इतना तो कर सकते हो न...? एक रस्सी को गाँठ लगा लो....और जब भी खाना-पीना हो उस वक्त उस गाँठ को खोल देना।' इस प्रकार उसे गंठसी पचक्खाण की जानकारी दी।

उसको बात जँच गई। उसने गंठसी पचक्खाण चालू कर दिया। वह दृढता से नियम का पालन करने लगा। एक बार कसौटी आ गई, गाँठ खुली ही नहीं ! फिर भी समाधि से उसने लिये हुए नियम को पालने की मन में ठान ली। आयुष्य पूरा हो गया। जुलाहे का जीव गंठसी पचक्खाण के पालन के बल पर कपर्दी देव हुआ।

सिद्धगिरिराज पर उस समय मिथ्यादृष्टि कपर्दी यक्ष का उपद्रव था। श्रीसंघ को वह बहुत तंग करता था। नया उत्पन्न हुआ कपर्दी यक्ष उपयोग देकर देख रहा था कि 'मेरे उपकारी वज्रस्वामी हैं' और वह दौड़कर आया और चरणों में गिर पड़ा। प्रभो ! मुझे सेवा का मौका दीजिये।'।

आचार्य भगवन्त ने श्री सिद्धगिरिराज की रक्षा और उपद्रव निवारण की बात कही। संघ कायोत्सर्ग में रहा और सम्यग्दृष्टि कपर्दी यक्ष (जुलाहे के जीव) ने मिथ्यादृष्टि कपर्दी यक्ष को हरा दिया। संघ ने नये कपर्दी यक्ष (कवड यक्ष) को श्री शत्रुंजय महातीर्थ के अधिष्ठायक के रूप से स्थापित किया।

गंठसी-वेढसी एवं मुड्डीसी पचक्खाण से महीने में सत्ताईस उपवास का फल मिलता है। चूँकि खाने-पीने के सिवाय का पूरा समय चार आहार के त्याग में ही जाता है।

संपूर्ण दिन का खाने-पीने का कुल समय कितना ? दो से ढाई घंटे के करीब....महीने के खाने के घंटे बासठ हुए अर्थात् तीन दिन हुए....तीस में से तीन दिन निकाल दो तो बचे सत्ताईस....

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 69

सत्ताईस दिनों का हमारा पचक्खाण हो जाता है...इस तरह यह पचक्खाण Very Simple एकदम सरल है। हर व्यक्ति कर सकता है। So Simple and So Great सरल है, फिर भी महत्वपूर्ण हैं! आज से ही आजमा कर देख लीजिये....बड़ा ही आनंद आयेगा।

## 6. नामकर्म

आत्मा का छद्म गुण है अरूपिपना। नामकर्म उस गुण को ढक देता है और जीव को रूपी शरीर पकड़ा देता है। इस कर्म को चित्रकार (Painter-Artist) की उपमा दी गई है। जैसे चित्रकार विभिन्न आकृति वाले चित्र बनाता है। पिकासो अपने ही ढंग के चित्र बनाते हैं तो Rembrandt अपने ही किस्म के.....कभी वे चित्र Mona Lisa जैसे मोहक होते हैं तो कभी इतने बिभत्स मानो दुनिया की सारी बिभित्सता एक Capsule में उलेच दी गई है।

उसी तरह यह नामकर्म की ही करामत है कि किसी की आकृति नीग्रो-सी तो किसी की आकृति चीना जैसी ! (झीणी आँखें और नाक चपटी) रशियन....अमेरिकन...रेड इंडियन....आफ्रिकन... जापनीज.....नेपाली....इंडियन....सभी की आकृतियाँ व रंग अलग-थलग ! भारत में भी आंध्र के लोग....पंजाब के....गुजरात के.....राजस्थान के....सभी अलग-अलग। इन सभी का म्यूझियम देखना हो तो सीमा पर तैनात सेना में हो आइये.... यह सब नामकर्म की ही करामत है...और किसी को वोइस ऑफ लता मिलती है, तो कोई मोहम्मद रफी, कोई माइकल जेक्सन तो कोई जेकीचेन बनता है, यह भी नामकर्म की ही बदौलत है। सुस्वर-दुस्वर, यश-अपयश, सौभाग्य-दुर्भाग्य, त्रस-स्थावरपना आदि सभी नामकर्म के आधीन है। अब तो हद हो गई ! नामकर्म की बातों को नहीं जानने वाली कर्मसत्ता से मिले त्वचा के रंग को

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 70

बदलने के लिये हमारी फैशन परस्त बहू-बेटियाँ ब्यूटीपार्लर में जाकर पंचेन्द्रिय हिंसा कर अंडों का रस अपने हाथ-पाँव पर मलाती हैं...! अहिंसाप्रेमियों ! जागो, अपनी बहू-बेटियों को ब्यूटी पार्लर में जाने से रोको या कड़क चेतावनी दो... वरना उपेक्षा करने वाले आप भी निर्दोष नहीं कहला सकते। चमड़ी को गोरी बनाने की बजाय आत्मा को गोरी बनाइये.....चमड़ी की कोमलता से बढ़कर हृदय की कोमलता है।

## 7. गोत्र कर्म

जीव का सातवाँ गुण है अगुरुलघुपन। वास्तविक रूप से जीव न तो उच्च है और न ही नीच....गोत्र कर्म इस गुण को रोकता है और उच्च-नीच के व्यवहार में निमित्त बनता है। इसे कुम्हार की उपमा दी गई है। कुम्हार एक ऐसी हस्ती है जो भगवान के पूजन में काम आये वैसा मांगलिक घड़ा-कलश भी बनाता है और शराब की स्टोरेज हो वैसे अशुभ घड़े भी तैयार करता है। उसी तरह गोत्रकर्म उच्च-नीच गोत्र दोनों देता है।

जैन-दर्शन बिल्कुल साइंटिफिक है। जैन-दर्शन हर बात को दो पहलूओं में बाँटता है - निश्चय और व्यवहार। निश्चयनय प्राणीमात्र को सिद्ध-बुद्ध, निरंजन-निराकार कर्मरहित मानता है, अतः इस नय से 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' की अलख जगती है....इस नय से न कोई उच्च है न कोई नीच, जैसे हम वैसे प्राणीमात्र ! इसीलिये तो किसी भी जीव की हिंसा करना.....भयंकर पाप है (जातपाँत को नहीं मानने की डिंग हाकने वालों ने कितने कत्लखाने खोल रखे हैं, यह सर्वविदित है।)

व्यवहार नय से आत्मा कर्म युक्त है, अतः उच्च-नीच भी। इसका मतलब यह तो है ही नहीं कि हमें धिक्कार-तिरस्कार करना

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 71



चाहिये, क्योंकि निश्चयनय उन्हें सिद्ध रूप बताता है। A Complete equilibrium सही संतुलन खड़ा हो जाता है। छूआछूत का शब्द आते ही आज के बुद्धिजीवी और नेताओं को मानो साँप सूँघ जाता है। भारतीय संस्कृति में जो परापूर्व काल से यह व्यवस्था थी, उसके पीछे कारण था। छूते नहीं थे, इसका मतलब यह थोड़े ही है कि आप उसका तिरस्कार करो।

इस्लाम, ख्रिस्ती, हिन्दू, जैन आदि सभी धर्मों ने M.C. मंथली कोर्स-मासिक धर्म-ऋतुकाल में तीन दिन तक सगी माँ-जननी, जंनेता, बहन, भावज आदि प्रत्येक नारी को अछूत-अस्पृश्य माना है, तो इसका मतलब क्या यह है कि माँ-बहिन धिक्कार के पात्र सिद्ध हुई ?

शास्त्रों ने और संस्कृति ने जिन-जिन मर्यादाओं को बाँधी है, उनमें पूर्ण वैज्ञानिकता रही हुई है। (इस हेतु पढिये, अनुवादक की पुस्तिका 'बचाओ...बचाओ !!') इसलिये बुद्धिजीवियों को और आज के देश के मांघाताओं को भारतीय संस्कृति और धर्म को सर आँखों पर उठाकर पुनर्विचार करना पड़ेगा...सेञ्च्यूल कॉस्ट नाम को जितना आज जगजाहिर किया गया है, उतना तो गत हजार साल में भी नहीं किया गया था.....उस वक्त उनके पास जो सुख था वह इन पचास सालों में उन्हें मिल नहीं पाया है.....उनका बाप-दादाओं का जो आरक्षित धंधा था उसे तो छीन लिया और नया आरक्षण नाम का भूत पैदा कर दिया और नये शिक्षित बेरोजगारों की बाढ़ खड़ी कर दी....। आरक्षण के नाम जिसको Nil के बराबर परसेंटेज आये हों....उसे जनजीवन रक्षण (भक्षण?) हेतु डॉक्टर बना दिया जाता है, इंजीनियर बना दिया जाता है....क्या हालत होगी ?

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 72

गोत्र कर्म ने जिस उँच-नीच की व्यवस्था की है....वह तभी टूट सकती है, जब आत्मा उस कर्म का सर्वथा नाश करेगी। उँच-नीच यह गोत्र कर्म की विकृति है।

## 8. अंतराय कर्म

आत्मा का आठवाँ गुण अनंतशक्ति - अनंतवीर्य है। इसे अंतरायकर्म रोकता है। यह भंडारी के समान है।

जैसे राजा के पास कोई याचक आया। राजा उस पर खुश हो गया। मगर भंडारी राजा को रोकता है। दान देने की इच्छा होते हुए भी काम कारगर नहीं होता है। सरकार ने तो एक करोड़ रुपये पास कर दिये, मगर लोगों के पास एक लाख भी नहीं पहुँचे हो, ऐसे उदाहरण बहुत मिलते हैं।

इसी तरह आत्मा में अनंत शक्ति आदि जो गुण रहे हुए हैं, उन्हें भंडारी की तरह यह कर्म रोकता है।

अंतराय कर्म के उदय से कृपणता, पराधीनता, दरिद्रता, निर्बलता आदि विकृतियाँ उत्पन्न होती है।

आत्मा के गुण उन्हें रोकने वाले कर्म और उन कर्मों की उपमा और विकृतियाँ गतपृष्ठों में समझायी गई है....उन्हीं बातों को आप नीचे के चार्ट में पायेंगे।

ज्ञानावरण आदि कर्म के अवांतर भेद और उनके बंधहेतुओं का विस्तृत विचार हम अगले प्रकरणों में करेंगे।

कर्मों का नाम	किस गुण को रोकता है ?	उदाहरण	विकृतियाँ
1. ज्ञानावरण	आत्मा के ज्ञान गुण को रोकता है	आँख की पट्टी के समान	अज्ञान
2. दर्शनावरण	आत्मा के दर्शन गुण को रोकता है	द्वारपाल के समान	निद्रा-अंधापा
3. वेदनीय	आत्मा के अव्याबाध सुख को रोकता है	शहद चुपड़ी तलवार	सुख-दुःख
4. मोहनीय	वीतराग भाव को रोकता है	शराब के समान	मिथ्यात्व, राग, द्वेष, काम, क्रोधादि, कषाय, हास्यादि, नो कषाय, अविरति
5. आयुष्य	आत्मा की अक्षय-स्थिति को रोकता है	जंजीर के समान	जन्म-मृत्यु
6. नाम	आत्मा के अरूपी गुण को रोकता है	चित्रकार के समान	शरीर, इन्द्रिय, वर्ण आदि, त्रसपना, स्थावरपना, यश-अपयश, सौभाग्य, दुर्भाग्य इत्यादि
7. गोत्र	आत्मा के अगुरुलघु गुण को रोकता है	कुम्हार के समान	उच्चकुल, नीचकुल,
8. अंतराय	आत्मा के अनंतलाभ गुण को रोकता है	भंडारी (खजांची) के समान	कृपणता, पराधीनता दरिद्रता, निर्बलता

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 74

## ज्ञानावरण कर्म के भेद और बंधहेतु

कर्म के आठ भेद और उनकी विकृतियों का विहंगावलोकन हम कर चुके हैं।

जगत में जिसे कर्मवाद का तलस्पर्शी या थोड़ा-बहुत भी ज्ञान हो तो वह कतई दुःखी नहीं हो सकता। भीषण विपदाओं से घिर जाय या बेशुमार सम्पदाओं से सुसज्जित हो जाय.... तो भी वह अपना मानसिक संतुलन सही रख सकेगा।

विपदाएँ एवं आपदाएँ उसे सत्यमार्ग से च्युत नहीं कर पायेगी और न ही उसे निराशा की गर्त में धकेल सकेगी। कर्मवाद के बूते वह विपदाओं को हँसते मुँह सहना सीख जाता है। इससे विपरीत जो कर्मवाद से अनभिज्ञ है, वह हर दूसरी-तीसरी बात को लेकर दुःखी-दुःखी हो जाता है।

अपने यहाँ 'कर्मवाद से सांत्वना और समाधि' के विषय को लेकर कामलक्ष्मी का दृष्टांत आता है।

### कामलक्ष्मी की रामकहानी

नगर के चौराहे पर दो स्त्रियाँ मस्ती से चल रही थी। पीछे से भागो... भागो.... 'पागल हाथी !' की चीख सुनाई दी। हाथी से बचने के लिये दोनों हड़बड़ा कर भागी तो दोनों के सिर से घड़े गिर गड़े...और चकनाचूर हो गये। पानी का मटका फूटा वह रो रही थी

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 75

और दही का मटका फूटा वह हँस रही थी। राज्य का मंत्री पास से ही गुजर रहा था। दृश्य देखा और उसे बड़ा अचरज हुआ।

पानी वाली को पूछा तो वह बोली 'सास डाँटेगी-फटकारेगी अतः रो रही हूँ।' नया मटका दिला दिया, चलो छुट्टी ! अब वह मुड़ा दही वाली अहीरन की ओर....'बहिनजी ! आप क्यों हँस दी?' वह बोली 'मंत्रीश्वर ! मेरी कहानी लंबी है...मैं किस-किस को रोऊँ ? मेरे जीवन में एक से बढ़कर एक रोने के किस्से हुए हैं....अब तो मेरे आँसू ही सूख गये हैं। यदि आपको समय हो तो पासवाले किसी बगीचे में चलिये, फिर...'

मंत्री को इस रहस्यमयी बात में दिलचस्पी जगी। उस स्त्री ने अपनी आत्मकथा इस तरह सुनाई-

'मैं एक अभागिन औरत हूँ....मैंने अपने जीवन में हर धूप-छाँव को देखी है....और मैं जीवन की हर टेडी-मेढ़ी पगडंडियों से गुजरी हूँ....वैसे मेरी काया....ब्राह्मण माता-पिता से बनी है....मेरा नाम कामलक्ष्मी है। यौवन के दलहीज पर पग रखते ही माँ-बाप ने मेरी शादी लक्ष्मीतिलक नगर के वेदसार ब्राह्मण के साथ की...'

यह सुनते ही मंत्री चौंका....चूँकि उसके पिता का नाम भी वेदसार ही था...और माँ का नाम कामलक्ष्मी !!

'भाग्य हमारा रूठा हुआ था...। एक दिन मैं नगरी के बाहर पानी भरने के लिये गई... कि अचानक शत्रु सैन्य ने हमारी नगरी पर आक्रमण कर दिया। नगरी के दरवाजे बंद हो गये। मैं बाहर ही निःसहाय खड़ी रही। शत्रु के सैनिकों ने मुझे घर दबोचा। बंदी बनाकर राजा के समक्ष खड़ी कर दी। मेरा सुंदर रूप देख, वह राजा मुझ पर मोहित हो गया। उसने मुझे अपनी पट्टरानी बना दी।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 76

मगर मेरा मन राजशाही में नहीं लगता था....मेरे प्राण तो निर्धनता में आकंट डूबे मेरे पतिदेव और मेरे छोटे-से पुत्र वेदविचक्षण के आस-पास ही घूमा करते थे... ।

मैंने कई तरकीबें सोची भागने की....सफल न हो सकी....राजाजी को कहकर एक दानशाला खुलवाई....जहाँ मुझे खोजते हुए मेरे प्राणप्रिय पतिदेव फटेहाल आये....मैंने उन्हें भीतर बुलवाया और उनके चरणों में गिर पड़ी....उनकी आँखें चूँधियाँ गईं । उन्हें अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हुआ....। मैंने उन्हें संकेत देकर शीघ्र स्वाना कर दिया कि काली चौदस को देवी के मंदिर में मुझे लेने के लिये आ जाना । मैं वहा आ जाऊँगी ।’

योजनानुसार अब मुझे नाटक करना था.....मैंने भयंकर पेट पीड़ा का बहाना बनाया और राजाजी को कहा कि मैंने देवी की मित्रत मानी है, उसे पूरी करनी है ।’ इस पर राजाजी तैयार हो गये । ठीक, काली.चौदस की मध्यरात्रि में राजा के साथ मैं देवी मंदिर पर पहुँची । राजा ने तलवार खोल कर मंदिर के बाहर रख दी और जैसे ही सिर झुकाकर द्वार में प्रवेश किया कि मैंने उसी तलवार से उसका काम तमाम कर दिया । अन्दर जाकर देखा तो वेदसार सर्पदंश से मर चुका था । मेरे तो होशहवाश उड़ गये...एकदम किंकर्तव्यमूढ बन गईं.....मेरी स्थिति ‘धोबी का कुत्ता, न घर न घाट का’ ‘अतो भ्रष्टः ततो भ्रष्ट’ हो गई । मैं भय के मारे घोड़े पर सवार होकर जंगल की ओर भागते हुए एक नगर के बाहर मंदिर में पहुँची । वहाँ भजन-कीर्तन चल रहा था । एक स्त्री ने मुझे फँसा दिया और अपने घर ले जाकर वेश्या बना दिया । ओह ! कर्म ने मुझे कैसे-कैसे नाच नचाये ? कहाँ एक दिन की ब्राह्मणी और फिर राजरानी और कहाँ वेश्यावृत्ति !

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 77

एक बार एक युवक आया....मैंने उसे अपने जाल में फँसाया। सोने की चिड़िया थी। मेरे आका ने कह रखा था कि इसे पूरा निचोड़ देना। उसके पास धनराशि समाप्त होते ही वह जाने लगा। जाते-जाते उसने अपना परिचय दिया !

ओह, मंत्रीश्वर ! आपको क्या बताऊँ....मेरा कलेजा चीरा जा रहा है....वह युवक और कोई नहीं....मेरा ही पुत्र वेद-विचक्षण था। वह मुझे और उसके पिता को खोजने के लिये निकला था। मैंने पवित्र संबंध को कलंकित कर दिया, ओह....!

उस वक्त तो मैंने मेरे पुत्र को इस बात की गंध भी न आने दी...और उसे विदा कर दिया। अब मेरा रोम-रोम रो रहा था....मुझे मेरे पाप का प्रायश्चित्त करना था...आग में जलकर भस्म होना था....मगर मेरी बदकिस्मत को यह नामंजूर था...उसे मेरी और हलाली करनी थी....वह हाथ धोकर मेरे पीछे पड़ी हुई थी...।

नदी के किनारे चित्ता तैयार करवा कर ज्योंहि अंदर कूदी कि यकायक शून्याकाश में उमड़-घुमड़कर काली बदलियाँ मँडराने लगी...और देखते ही देखते मूसलाधार बारिश चालू हो गई...और नदी में जबरदस्त बाढ़ आ गई। चित्ता में जलने की बजाय मैं बाढ़ के पानी में बहने लगी। मैं आग में झुलसी जरूर थी, मगर हाँशहवाश में थी, अतः तैरने की व्यर्थ कोशिश करने लगी। जब मैं डूबने लगी तो दूर-सुदूर खड़े एक अहीर ने मुझे देखा और वह पानी में कूद पड़ा और मुझे बचा कर मुँह से पानी निकाल दिया। वह मेरे रूप लावण्य पर मोहित हो गया और मुझे अपनी औरत बना डाला। सच ही कहा है कि 'रक्षण बिना का स्त्री का रूप - लावण्य स्त्री के लिए वरदान नहीं बल्कि अभिशाप है।' कहाँ ब्राह्मणी... राजरानी.....वेश्या...और आज मैं अहीरन ! वाह रे, मेरे कर्म !

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 78

यकायक 'माँ...माँ' कहता हुआ मंत्रीश्वर कामलक्ष्मी के चरणों में गिर पड़ा...कामलक्ष्मी सन्न रह गई....!

वह बोला- 'माँ ! मैं ही तुम्हारा वह पापी पुत्र वेदविचक्षण हूँ, जिसने अज्ञानता में अपनी माँ को वासना का शिकार बनाया... !' घोर पश्चात्ताप हुआ ।

दोनों आचार्य भगवंत के चरणों में पहुँच गये और मन-वचन और काया के सभी पापों का द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव से प्रायश्चित्त कर...चारित्र धर्म अंगीकार कर....सुविशुद्ध साधना कर दोनों पुण्यात्मा मोक्ष के अविचल सुख को प्राप्त हुए ।

इस प्रकार कर्मवाद को समझा हुआ व्यक्ति भयंकर परिस्थितियों में भी अपना मानसिक संतुलन बनाये रखता है और सुविशुद्ध प्रायश्चित्त कर अपनी आत्मा को शुद्ध-बुद्ध-निरंजन-निराकार बना लेता है....जीवन में कैसे भी भयंकर पाप हो गये हो.....आँसूओं के साथ गीतार्थ गुरुभगवंत के चरणों में प्रायश्चित्त ले लीजिये...!

(प्रायश्चित्त कैसे लेना चाहिये ? किन-किन पापों का प्रायश्चित्त लेना चाहिये ? आदि बातों की विस्तृत और क्रमबद्ध जानकारी प्राप्त करने के लिये....आज ही मँगवाकर पढ़िये....लेखक की सर्वाधिक प्रशंसित पुस्तक सचित्र 'कहीं मुरझा न जाय' हिन्दी और गुजराती दोनों भाषाओं में उपलब्ध है।)

ज्ञानावरण कर्म के मुख्य पाँच भेद हैं । चूँकि मतिज्ञान आदि ज्ञान के पाँच भेद हैं, अतः उन्हें रोकने वाले ज्ञानावरण कर्म के मतिज्ञानावरण आदि भी पाँच भेद हैं ।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 79





## मतिज्ञान और मतिज्ञानावरण

पाँच इन्द्रियाँ 1. ठुड़ी पर हथेली का अंगूठा रखिये यह है स्पर्शेन्द्रिय पूरा शरीर 2. दूसरी अंगुली जीभ पर रखिये यह रसनेन्द्रिय, इसके दो काम है स्वाद लेना यानि चखना और चखाना यानि (बोलना) । दोनों काम डेन्जरस हैं। इससे बच कर चलिये....इसे कंट्रोल में रखिये....इसने कई घर उजाड़ दिये हैं। (3) तीसरी अंगुली नाक पर रखिये....यह घ्राणेन्द्रिय है। (4) चौथी अंगुली आँख पर रखिये....यह चक्षुरिन्द्रिय है। इसका दूसरा मोडर्न नाम है Gate way of all Sins सभी पापों का प्रवेशद्वार। लुक-छिप कर बी. पी. देखने का पाप यही इन्द्रिय करवाती है और बहू-बेटियों पर वासना भूखी निगाहें यही इन्द्रिय डालती है.....कुदरत ने फर्स्टक्लास दो दरवाजे दिये हैं....अश्लील दृश्यों को आँख फाड़कर देखने की बजाय इन दरवाजों को बंद करना सीखिये.....मरणं बिंदुपातेन' की बेवक्त की मौत से बच जायेंगे.....जीवनभर तंदुरस्त रहेंगे। (5) पाँचवीं अंगुली कान पर रखिये....यह है श्रवणेन्द्रिय.....इससे वासनोत्तेजक अश्लील गीतों

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 80

को सुनने की बजाय परमात्म भक्ति से ओतप्रोत सुंदर गीतों को.....सज्जनों के गुणगानों को सुनिये....कान पवित्र हो जायेंगे.....

इन सबसे खतरनाक है मन । यह सबका संचालक है....'मन एवं मनुष्याणां कारणं बंधमोक्षयोः' मन के जीते जीत है, मन के हारे हार ।

हाँ, तो अपनी बात चल रही थी मतिज्ञान की....उपरोक्त पाँच इन्द्रियों और मन से जो ज्ञान यथार्थ रूप से होता है उसे मतिज्ञान कहते हैं और अयथार्थ रूप से होता है, उसे मतिअज्ञान कहते हैं। आगे के भेदों में भी यही समझ लेना । सम्यक्त्व सहित हो उसे ज्ञान कहते हैं और सम्यक्त्वरहित-मिथ्यात्व सहित हो उसे अज्ञान कहते हैं।

मतिज्ञान को रोकने वाला कर्म मतिज्ञानावरण कहलाता है ।

## 2. श्रुतज्ञान और श्रुतज्ञानावरण

शास्त्र पढ़ने से या शब्दों को सुनकर जिस अर्थ का ज्ञान होता है, उसे श्रुतज्ञान कहते हैं।

विशेषता :- मतिज्ञान से इसकी विशेषता यह है कि....अमुक शब्दों को सुनने की बाद श्रवणेन्द्रिय से जो शब्दमात्र का ज्ञान होता है, उसे मतिज्ञान कहते हैं....क्योंकि जो व्यक्ति उस भाषा को नहीं जानता है, वह भी यह God शब्द है, ऐसा तो जान ही सकता है....मगर God शब्द अर्थ भगवान होता है, यह तो उस भाषा को जानने वाला ही समझ सकता है। इस शब्द का यह अर्थ होता है ऐसा जो उस भाषा के जानकार को ज्ञान होता है, उसे श्रुतज्ञान कहते हैं। (विस्तृत विवेचन विशेषावश्यक भाष्य टीका में उपलब्ध है) इस श्रुतज्ञान को रोकने वाला कर्म श्रुतज्ञानावरण है।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 81

### 3. अवधिज्ञान और अवधिज्ञानावरण

इन्द्रिय और मन की सहायता के बिना आत्मा रूपी द्रव्यों का जो ज्ञान करता है, उसे अवधिज्ञान कहते हैं। देव और नारक को यह जन्म से ही होता है अतः भव प्रत्ययिक कहा जाता है। मनुष्य और तिर्यचों में यह गुण से पैदा होता है। अतः उसे गुण प्रत्ययिक कहा जाता है।

इस अवधिज्ञान को रोकने वाला कर्म अवधिज्ञानावरण कहलाता है। यह आवरण जब हटता है तब मनुष्य यहाँ बैठे-बैठे ही देवलोक आदि देखने लगता है।

एक मुनिश्री कायोत्सर्ग में खड़े थे। भावों की विशुद्धि इतनी बढ़ गई कि मुनिश्री को अवधिज्ञान हो गया। अवधिज्ञान से उन्होंने देवलोक में उपयोग दिया। वहाँ उन्होंने एक विचित्र दृश्य देखा।

इन्द्र अपनी पट्टरानी इंद्राणी के साथ शय्या पर बैठा हुआ है। मानुनी इंद्राणी किसी कारणवश गुस्से में आ गई और उसने इन्द्र को लात मार दी। इन्द्र उसके पाँव को सहलाने लगा और पूछने लगा 'कहीं तुम्हारे पाँव को चोट तो नहीं आई ?'

मोहनीय कर्म के उदय से बत्रीश लाख विमान के स्वामी इन्द्र का यह बर्ताव देखकर मुनि को सहज हँसना आ गया। मुनि हँसे नहीं कि तुरन्त आया हुआ अवधिज्ञान चला गया।

हँसना....मजाक उड़ानी आदि कितना भयंकर है.....? यह इस दृष्टांत से समझा जा सकता है। अवधिज्ञान जैसा अवधिज्ञान भी चला गया...तो अन्य चीजें क्या वक्त रखती हैं ?

## 4. मनःपर्यवज्ञान और मनःपर्यवज्ञानावरण

मनुष्यक्षेत्र= ढाई द्वीप में रहे हुए संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव के मनोवर्गणा से बने हुए मन का जो साक्षात् ज्ञान करे, उसे मनः पर्यव (पर्याय) ज्ञान कहते हैं। मन की विशिष्ट रचना को देखकर वे चिंतित पदार्थ को अनुमान से जानते हैं।

इस मनःपर्यवज्ञान को रोकने वाला कर्म मनःपर्यवज्ञानावरण कहलाता है।

### कोने में बैठी बिल्ली...?

किसी एक गाँव के राजा को एक लोभी ब्राह्मण राजपुरोहित रोज धर्म सुनाता था। उसकी पत्नी उसे बार-बार टोकती कि 'दर्जी का बेटा जीयेगा तब तक सीयेगा। अतः चलो... तीर्थयात्रा कर आये...!' पत्नी का सवाल था। मर्जी न होते हुए भी उसने हॉमी भरी और दिन तय किया। निश्चित दिन के पूर्व वह राजा के पास पहुँच गया। वह सोचने लगा कि 'न करे नारायण मेरी सीट कोई दूसरा विदेशी पंडित हजम कर जाय !' इसलिये उसने एक सुन्दर तरकीब ढूँढ निकाली और राजा से बोला 'राजन् ! मैं तीर्थयात्रा के लिये जा रहा हूँ, आपकी आज्ञा से, मगर....मगर...! राजा बोला- 'बोलो, बीच में अटक क्यों गये ?' ब्राह्मण बोला- 'देखिये, आजकल कई ऐसे ढोंगी पंडित घूमते रहते हैं, जिन्हें शास्त्र का तनिक भी ज्ञान नहीं होता है....फिर भी भोले-भाले लोगों को उल्लू बनाते-फिरते हैं.....आपको भी लोग फँसा न दे, इसलिये मैं आपको एक परीक्षा लेने का तरीका बता देता हूँ.....चाहे कितना भी बड़ा विद्वान क्यों न आ जाय....आप उसकी विद्वता की चासनी देख लेना।

राजा बोला- अच्छा ! बताइये वह क्या है ?

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 83

राजपुरोहित जानता था कि राजा को संस्कृत भाषा बिल्कुल नहीं आती है, अतः वह बोला 'देखिये राजन् ! कोई भी विद्वान आये...उसे पूछिये 'परोपकाराय सतां विभूतयः' का अर्थ क्या होता है ? पुरोहित ने राजा को एक चिट्ठी थमाते हुए कहा यदि वह यह उत्तर दे तो समझना वह विद्वान है अन्यथा समझना वह मूर्ख है... ।

उस पत्र में लिखा था कि 'परोपकाराय सतां विभूतयः' का अर्थ है - कोने में बैठी बिल्ली चने खा रही हैं ।

राजा ने स्वीकार कर लिया । ब्राह्मण यात्रा के लिये रवाना हो गया । इस बीच राजा के पास कई विद्वान आये, परन्तु सभी को उसने फेल कर दिया.....क्योंकि राजा के मन में तो राजपुरोहित द्वारा बताया अर्थ ही सही था, जो कोई बताता नहीं था ।

एक दिन एक जैन मुनि पधारे । वे चार-ज्ञान के धारक थे। मनःपर्यवज्ञानी थे । राजा ने परीक्षा के लिये पूछा ।

ज्ञानी भगवंत ने कहा- 'हे राजन् ! तुम्हारे मन में परोपकाराय संता विभूतयः का अर्थ है 'कोने में बैठी बिल्ली चने खा रही है' और इस संस्कृत वाक्य का सही अर्थ है 'सज्जनों की सम्पत्तियाँ-विभूतियाँ परोपकार के लिये होती है ।'

यह सुनकर राजा अत्यन्त खुश हुआ और वास्तविक धर्म को सहर्ष स्वीकार अपनी आत्मा का उसने कल्याण किया ।

इस तरह मनःपर्यवज्ञानी दूसरों के मन को जानकर स्व-पर कल्याण करते हैं । मनःपर्यवज्ञान के दो भेद हैं । 1. ऋजुमति और 2. विपुलमति ।

इस मनःपर्यवज्ञान का आवारक कर्म मनःपर्यवज्ञानावरण है ।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 84

## 5. केवलज्ञान और केवलज्ञानावरण

लोक एवं अलोक तथा भूत-भविष्य और वर्तमान तीनों काल के द्रव्य, गुण एवं पर्याय का संपूर्ण ज्ञान जिससे होता है, उसे केवलज्ञान कहते हैं। उसे रोकने वाला कर्म केवलज्ञानावरण कहलाता है।

### ज्ञानावरण कर्मबंध के कारण

ज्ञानावरणकर्म जिन कारणों से बँधता है, उन्हें ज्ञानावरणकर्म बँध के हेतु कहे जाते हैं, मुख्यतः ऐसे पाँच कारण हैं। यद्यपि उनके भेद-प्रभेदों को देखा जाय, तो बहुत भी हो सकते हैं।

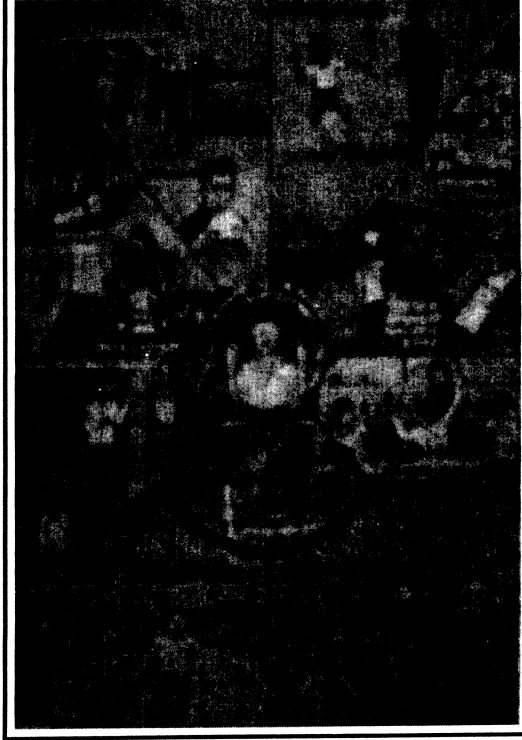
1. प्रत्यनीकता- ज्ञानी गुरु के प्रति शत्रुता रखनी....उन पर पत्थर फेंकना....उन्हें पीटना....उनके सामने बोलना आदि। आज स्कूल-कॉलेज के छात्रों में यह दुर्गुण कुक्कुरमुत्ते की तरह यत्र-तत्र-सर्वत्र उग आया है और दिन-दूने रात-चौगुने पनपता जा रहा है। फल-फूल रहा है...यह एक सोचनीय दशा है। इससे भयंकर ज्ञानावरणीय कर्म बँधता है।

2. प्रद्वेष ज्ञान- ज्ञानी गुरु के प्रति मन में द्वेष संजो कर रखना....उन्हें गाली देना....आदि। कोई पढ़ने के लिये या प्रश्न पूछने के लिये आये तो यह क्या माथापच्ची ? फिजूल का सिर खा रहे हो ! नींद हराम कर रहे हो ! चलो, फूटो यहाँ से....ऐसा वचन से बोलना या मन में सोचना।

वरदत्त के जीव ने पूर्व भव में ऐसा ही सोचा था, अतः उसने ज्ञानावरण कर्म बाँधा।

रे कर्म तेरी गति न्यासी...!! / 85

## ज्ञानवरण व दर्शनावरण कर्म के बन्ध के कारण



### वरदत्तकुमार

वसुसार और वसुदेव नामक दो भाईयों ने वैराग्य पाकर दीक्षा ली। वसुदेव छोटा था मगर मेधावी था....अतः सिद्धांतों का पारगामी बन गया...और पाँच सौ साधुओं को पढ़ाने लगा....अनुक्रम से वसुदेव आचार्य बने।

एक दिन रात को सोने का समय हो गया था। फिर भी साधु एक-एक कर आते-जाते थे....प्रश्न पूछते थे। अतः वसुदेव आचार्य को अपने ज्ञान पर एकदम गुस्सा आ गया 'ओह ! मैं शास्त्रों का ज्ञाता बना। इसीलिये मुझे पूछ-पूछ कर तंग करते हैं न ! मेरा बड़ा

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 86

भाई वसुसार कुछ पढ़ा-लिखा नहीं है तो उसे कितनी मजा है ? सुख से सोता है, सुख से खाता है...पीता है। मुझे भी ऐसा सुख प्राप्त हो !' इस प्रकार ज्ञान के प्रति द्वेष रख कर आचार्यश्री बारह दिन तक मौन रहे। और किसी को ज्ञान दिया नहीं, अतः भयंकर ज्ञानावरणीय कर्म बाँधा।

संयम का पालन किया था, अतः मरकर राजा के पुत्ररूप में उत्पन्न हुए। नाम रखा गया वरदत्त। परन्तु ज्ञानावरणीय कर्म तीव्र बाँधा हुआ था। अतः विद्या चढ़ती नहीं थी।

ज्ञानावरणीय के साथ पूर्वभव में अशातावेदनीय कर्म भी बाँधा हुआ था, अतः यौवनावस्था में कोढ़ रोग भी हो गया।

एक बार वरदत्त के पिता अजितसेन राजा ने ज्ञानी गुरु विजयसेन को इसका कारण पूछा तो उन्होंने वरदत्त का पूर्वभव कह सुनाया। सुनते ही वरदत्तकुमार को जातिस्मरणज्ञान हो गया।

गुरु भगवंत के कहने से वरदत्तकुमार ने ज्ञानपंचमी की आराधना की। उस आराधना के प्रभाव से पूर्वभव का कर्म कुछ हल्का हुआ...अतः कुष्ठरोग-कोढ़ ठीक हुआ और ज्ञान की प्राप्ति हुई। दीक्षा लेकर वरदत्त ने आत्मकल्याण किया।

## 2. निहव

स्वयं ज्यादा जानने लग जाय अथवा स्वयं को ज्यादा प्रसिद्धि मिल जाय तो अपने गुरु का नाम छुपाना। जिससे लोगों को यह न हो कि ऐसे कम ज्ञान वाले के पास पढ़े हैं ? इस तरह गुरु का नाम छुपाना निहव कहलाता है।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 87



### 3. उपघात

ज्ञान के साधनों का नाश करना या जलाना आदि। जैसे आज कितने ही स्कूल-कॉलेजों के छात्र अपनी मूर्खता से पढ़ने की पुस्तकों की होली करते हैं...और भयंकर ज्ञानावरणीय कर्म बाँधते हैं....जिस कर्म के उदय में आने पर गूँगा बनकर ऊँ.....ऊँ.....कहना पड़ेगा.....रोगी शरीर मिलेगा।

गुणमंजरी का उदाहरण इस स्थल पर अप्रासंगिक नहीं कहा जायेगा।

### गुणमंजरी

जिनदेव सेठ की पत्नी का नाम सुंदरी था। पाँच पुत्र और चार पुत्रियों के साथ सेठ अपनी गृहनैया चला रहे थे। बच्चों को पढ़ाने के लिये एक शिक्षक रखा। बच्चे उद्वंड थे। शिक्षक उन्हें सेठ के कहने से मार-पीट, डरा-धमका कर पढ़ाते थे। 'सोटी बाजे चम-चम, विद्या आये घम-घम' का सिद्धांत जो था। बच्चे जाकर अपनी माँ से शिकायत करते थे। माँ अनपढ़, गँवार और ज्ञान पर प्रद्वेष रखने वाली थी। वह बच्चों से कहती- 'बच्चों ! तुम्हारा बाप जिस अध्यापक को बुलाता है, उसे कैसे भगाना, तुम नहीं जानते? अपने पास अथाह धन है, पढ़ने की क्या जरूरत है ? कल पंडितजी आये तो उन्हें पत्थर मारकर भगा देना...नाम नहीं लेंगे दूसरे दिन आने का....!

बच्चों को तो इशारा ही काफी था....बंदर को दारु पिला दी.....फिर तो क्या कहने ! बच्चों ने पंडितजी को मार भगाया और इधर सुंदरी ने ज्ञान के प्रद्वेष से पाठ्य सामग्री सब कुछ आग में झोंककर जला कर राख बना दी।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 88

लड़के बड़े हुए। शादी की बात चली। योग्य कन्याओं की खोजबीन शुरू हुई। कोई अपनी लड़की अनपढ़-गँवार को देना नहीं चाहता था।

सेठ ने सेठानी को डाँटा...यह सब तुम्हारी ही करतूत है। 'तुमने बच्चों को उल्टा ज्ञान दिया...उसी का परिणाम है कि अब अपने बच्चों को कोई लड़की देने को तैयार नहीं है.....लड़के अनब्याहे रहेंगे.....इस अनर्थ के मूल में तुम्हारा ही हाथ है।'

सुंदरी से कटूवचन सहन नहीं हुए और वह अपना बचाव करते हुए बोली- 'पुत्र का ध्यान रखने का काम माता का नहीं, पिता का होता है।'

'उल्टा चोर कोतवाल को डांटे' की तर्ज पर पर अपनी ही पत्नी द्वारा आरोप लगाने से सेठजी उद्वेलित हो उठे और क्रोधान्ध बनकर सुंदरी के सिर पर पत्थर से प्रहार किया। पत्थर के प्रहार से सुंदरी तड़फ-तड़फ कर मर गई। सुंदरी का जीव सिंहदास नामक सेठ के घर पुत्री के रूप में उत्पन्न हुआ। उसका नाम गुणमंजरी रखा। पूर्वभव के कर्म से वह जन्म से ही गूंगी और रोगयुक्त थी। सोलहवाँ साल लगा....यौवन देह से झलक रहा था....मगर उसके साथ कोई शादी करने को तैयार नहीं था।

एक दिन उद्यान में श्रीविजयसेनसूरि गुरुभगवंत पधारे। पिता के साथ गुणमंजरी भी देशना सुनने के लिये गई...। गुरु भगवंत के मुँह से अपना पूर्वभव और ज्ञानविराधना की बातें सुनकर उसे जातिस्मरण ज्ञान हो गया। गुणमंजरी अपार पश्चात्ताप करने लगी। ओह ! मूढ ऐसी मैंने ज्ञानविराधना कर कितनी बड़ी भारी भूल की। ज्ञानावरणकर्म क्षय का उपाय पूछने पर गुरु भगवंत ने ज्ञान-पंचमी की आराधना बताई। तदनुसार गुणमंजरी ने श्रद्धापूर्वक आराधना-

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 89

साधना की। चारित्र लिया। सुविशुद्ध पालन कर अनुत्तर देवलोक में उत्पन्न हुई। वहाँ से एक भव करके गुणमंजरी मोक्ष में जायेगी।

कहीं आप तो...?

जिस तरह गुणमंजरी ने पुस्तकों को जलाकर तीव्र ज्ञानावरण कर्म बाँधा। उसी तरह आज भी कई लोग अज्ञानतावश पुस्तकें जला देते हैं...दीपावली के दिन आतिशबाजी कर पटाखे फोड़ते हैं। इन पटाखों से बेचारे उड़ने वाले पक्षी घबरा कर रात को इधर-उधर टकराकर मौत के मुँह में चले जाते हैं। इन पटाखों की वेदी पर असंख्य मूक पक्षी भेंट चढ़ जाते हैं।

‘अबोल पशु करे पुकार, हमें बचाओ हे नरनार !’ इन पटाखों से कई दुकानों एवं मकानों में आग लग जाती है....। बच्चे जल जाते हैं....। अपंग हो जाते हैं....। अपार जन-धन की हानि होती है...। चींटी आदि जीवों की होली और हमारी दीपावली ? वाहजी...वाह...! यह कैसा न्याय !!

ज्ञान की विराधना के साथ अन्य भी कई नुकसान हैं...पटाखे नहीं फोड़े तो क्या खाई हुई रोटी नहीं पचती ? न तो हमें फोड़ने चाहिये और न किसी को लाकर देने चाहिये.....नौजवानों ! इस व्यर्थ की हिंसा से बचने के लिये बुलंदी के साथ एक ही आवाज में कह दीजिये ‘पटाखे नहीं फोड़ेंगे.....नहीं फोड़ेंगे....’(कई नौजवानों ने जोश में अहिंसा प्रेम जताया)...देखिये....नेता लोग शपथ लेते हैं तब ही वे राज्यपाल....पी. एम. आदि कहलाते हैं। इसी तरह आप सभी परमात्मा की साक्षी में प्रण लीजिये....(कई युवकों ने स्वेच्छा से भीष्म प्रतिज्ञा की) वाह....वाह....आप सभी वीर प्रभु के शासन के वीरसंतानों को धन्यवाद !!

२ कर्म तेरी गति न्यारी...! / 90

## 4. अन्तराय

कोई भी व्यक्ति पढ़ रहा हो तो विघ्न पहुँचाना....परेशान करना.....रेडियो, टीवी तेज बजाना.....जोर-जोर से चिल्लाकर बातें करना....हँसना....जिससे पढ़ाई करने वाला बेचारा चाह कर भी पढ़ाई नहीं कर सकें.....उसे दूसरा काम बता देना....जिससे उसे पुस्तक छोड़नी ही पड़े....इस प्रकार अन्तराय करने से ज्ञानावरणीय कर्म बंधते हैं।

## 5. आशातना

पोस्ट कवर, इनलेण्ड लेटर, पोस्टल टिकिट आदि को थूँक से चिपकाना.....पुस्तक, कागज, पेन, पेन्सिल, नोट-रुपये आदि हाथ में या जेब में रखकर पेशाब करना....संडास जाना....कागज पर संडास Latrine जाना....अखबार में नाश्ता खाना....अक्षर वाले टी-शर्ट पहिनना इत्यादि से भयंकर ज्ञानावरणीय कर्म बँधते हैं। आपके शर्ट की कोलर पर टेलर की छाप, पेंट और अंडरवीयर आदि पर जो स्टीकर छापें लगती हैं, वे आपके किसी काम की नहीं है....। यदि आप इन्हें काटकर अलग निकाल देते हैं तो ठीक करना....ज्ञानावरणीय कर्म का व्यर्थ ही बंध कर लेते हैं....। नासमझ बहिनें भी कई बार अपने बच्चों को अखबार पर टट्टी करवाती है....। जो सर्वथा अनुचित है...। चूँकि उससे भयंकर ज्ञानावरणीय कर्म बँध होता है। ज्ञानावरण की बात पूरी हुई । अब हम आपको दर्शनावरण की बातें समझायेंगे।



रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /91

## दर्शनावरण के भेद और बंध हेतु

### दर्शनावरण के नौ भेद

वस्तु के सामान्यबोध को दर्शन कहते हैं। 'यह कुछ है' ऐसे बोध को दर्शन कहते हैं। उसे रोकने वाला कर्म दर्शनावरण कहलाता है। उसके नौ भेद हैं।

1. चक्षु दर्शनावरण- आँख के द्वारा होने वाले सामान्य बोध (दर्शन) को रोकने वाले कर्म को दर्शनावरण कहते हैं।

2. अचक्षु दर्शनावरण- आँख से अतिरिक्त शेष चार इन्द्रिय द्वारा होने वाले सामान्य बोध (दर्शन) को रोकने वाला कर्म अचक्षुदर्शनावरण कहलाता है।

3. अवधिदर्शनावरण- रूपी द्रव्य के साक्षात् सामान्य बोध को रोकनेवाला कर्म अवधिदर्शनावरण कहलाता है।

4. केवलदर्शनावरण- जगत के समस्त पदार्थों के दर्शन को रोकने वाला कर्म केवलदर्शनावरण कहलाता है।

5. निद्रा- जिस कर्म के उदय में आने पर सुख पूर्वक जग सके उसे निद्रा दर्शनावरण कहते हैं।

6. निद्रा-निद्रा - जिस कर्म में उदय में आने पर कष्ट पूर्वक जग सके उसे निद्रा-निद्रा दर्शनावरण कहते हैं।

7. प्रचला- जिसके उदय से आने पर खड़े-खड़े या बैठे-बैठे नींद आये उसे प्रचला दर्शनावरण कहते हैं।

— रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 92

8. प्रचला-प्रचला - जिसके उदय में आने पर चलते-चलते नींद आए, उसे प्रचला-प्रचला दर्शनावरण कहते हैं जैसे- घोड़ा ।

9. स्त्यानर्धि- जिसके उदय में आने पर दिन में सोचा हुआ कठिनतम कार्य भी नींद में करले उसे स्त्यानर्धि (थीणद्धि) दर्शनावरण कहते हैं। इस अवस्था में प्रथम संघयण वाले को अर्द्धचक्री यानि वासुदेव....उसका आधा बल होता है। अंतिम संघयण वाले व्यक्ति को अन्य व्यक्ति की अपेक्षा दुगुनी या तिगुनी ताकत होती है ।

## दर्शनावरण कर्म-बंध के कारण

ज्ञानावरण कर्मबंध के जो कारण बताये गये हैं, वे ही दर्शनावरणीय कर्म के भी हैं। सिर्फ इतना विशेष यहाँ समझना है कि, यहाँ दर्शन और दर्शनीक्य घात होता है और वहाँ ज्ञान और ज्ञानी का ।



प्रवचन-7

## वेदनीय कर्म के भेद और बँध हेतु

वेदनीय कर्म के दो भेद हैं-

### 1. शातावेदनीय

जिसके उदय से आत्मा को आरोग्य और इन्द्रिय आदि से उत्पन्न होने वाले सुख का अनुभव होता है। जैसे कि देव का भव....



रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 94

## 2. अशातावेदनीय

जिस कर्म के उदय से जीव को रोग का भोग बनना पड़ता है....पीड़ा सहनी पड़ती है...इन्द्रिय आदि से उत्पन्न होने वाले दुःख को भुगतना पड़ता है.....जैसे कि नरक के भव में इत्यादि ।

### वेदनीय कर्म के बँधहेतु

गुरुभक्ति आदि से शातावेदनीय कर्म का बंध होता है ।

#### 1. गुरु भक्ति

गुरु भगवंत की सेवा-वैयावच्च करनी....गुरु के प्रति समर्पण, सद्भाव, सम्मान और बहुमान भाव रखना जैसे गौतमस्वामी ने अपने गुरु त्रिलोकपति महावीरदेव के प्रति रखा था ।

गुरु भक्ति से शातावेदनीय का बंध होता है ।

#### 2. क्षमा

गाली का जवाब गोली से....ईंट का जवाब पत्थर से....लात का जवाब लाठी से....और बात का जवाब बम से दिया जाना, मानव मन की बिमारी का सूचक है....

‘बात-बात में बम अब बरसता है ।

पानी महँगा और खून सस्ता है ।

जीओ और जीने दो भूल गए-

आज महावीर की आवश्यकता है ।’

कोई गाली दे....या पत्थर से मारे या लाठी से प्रहार करे तो भी क्षमा रखना....चूँकि क्षमा रखना...यह वीरों का भूषण है, ‘क्षमा वीरस्य भूषणम्’ इस गुण पर शास्त्रों में कई दृष्टांत हैं । कान में कीलें

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 95



लगाई... चंडकौशिक सर्प ने पाँव में दंश दिया तो भी भगवान महावीर ने क्षमा रखी.....चिलाती पुत्र के शरीर को चींटियों ने छलनी बना दिया....झांझरिया ऋषि का राजा ने गला कटवा दिया....दृढप्रहारी की देह को लोगों ने मार-मार कर लहलुहान कर दिया...। क्षमा-धर्म का आश्रय किया।

## दृढप्रहारी चोर साधक सिरमौर बना

दृढप्रहारी जैसा खूँखार डाकू, लूटेरा, चोर, साधकों का सिरमौर बन गया.....यह असंभव कैसे संभवित हुआ.....?

दृढप्रहारी एक भयंकर हत्यारा था। उसने कई स्त्री पुरुषों के खून किये थे। एक दिन एक गरीब ब्राह्मण के घर वह चोरी करने गया। गरीब के घर कहाँ सोना-चाँदी? वहाँ तो थी सिर्फ खीर! दृढप्रहारी ने सोचा ....यही सही! और वह झपटा....ज्योंहि उसने खीर उठाई, ब्राह्मण के बच्चों ने शोर मचाया। दृढप्रहारी और उसके साथियों ने जो बीच में आया उन्हें मार दिया।

दृढप्रहारी खीर झपटने लगा....ब्राह्मण ने रुकावट डाली तो दृढप्रहारी ने उसका गला काट डाला.....गाय सामने आई तो उसको मार डाली....ब्राह्मणी आई तो उसके पेट पर तलवार मारी....गर्भ में रहा हुआ बालक नीचे गिरा और तड़फ-तड़फ कर प्राण त्याग दिये.... अन्य छोटे बच्चे माँ की असमय मौत से विलाप करने लगे.....!

अपने हाथों गो-ब्राह्मण-स्त्री और भ्रूण, इन चारों की निर्मम हत्या देख...दृढप्रहारी का कलेजा काँप उठा.....बच्चों के करुण रुदन ने उसे झकझोर दिया।

३ कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 96

वह गाँव से बाहर आया और उसे एक जैन मुनि मिले। अपने जीवन की काली किताब को जस का तस खोलकर बता दी....पाप शुद्धि के लिए चारित्र अंगीकार किया। तदन्तर दृढप्रहारी ने दृढ प्रतिज्ञा ली....जब तक दूसरे लोगों को मेरे पाप याद रहे.....लोग मुझे मेरे पापों की याद दिलाते रहें, तब तक अन्न-पानी का सर्वथा त्याग... !

भीष्म प्रतिज्ञा वाले दृढप्रहारी मुनि गाँव के बाहर चारों दरवाजे पर एक-एक माह कायोत्सर्ग में खड़े रहते थे....। लोग उन्हें गाली देते....पत्थरों से.....लाठी से....मुट्टी से मारते.....मगर दृढप्रहारी मुनि सब कुछ सह लेते थे....अपूर्व क्षमा के साथ !!

इससे उन्हें शातावेदनीय कर्म बँधा।

अनुक्रम से चार महिने के बाद उन्हें केवलज्ञान प्राप्त हुआ।

### 3. दया

मेघकुमार के जीव ने हाथी के भव में खरगोश की दया की....शातावेदनीय कर्म बाँधा, अतः हाथी के भव में से सीधे श्रेणिक राजा के पुत्र मेघकुमार हुए....।

### 4. व्रतपालन

महाबल राजा ने सुंदर व्रतों का सुंदर पालन किया....अतः शातावेदनीय बाँधकर देवलोक में गये.....।

### 5. शुभयोग

पडिलेहण आदि शुभयोगों से शातावेदनीय कर्म बँधता है....।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 97

वल्कलचीरी को पडिलेहण करते हुए जातिस्मरण हुआ और केवलज्ञान भी हो गया।

## 6. क्रोधादि कषायों के ऊपर विजय

क्रोध आदि आंतर शत्रु हैं। उन पर विजय प्राप्त करने से अवंतिसुकुमाल की तरह.....शातावेदनीय का बँध पड़ता है। गजसुकुमाल भी क्रोधादि विजय कर केवलज्ञान को पाये।

## 7. दान

शालिभद्र के जीव संगम ने मुनि को निर्दोष गोचरी वोहरा कर सुपात्रदान दिया और शातावेदनीय कर्म बाँधा....निन्यानवें पेटियाँ रोज देवलोक से उतरने लगी। अनुक्रम से दीक्षा लेकर साधना कर अनुत्तर में पधारे। महाविदेह से मोक्ष जायेंगे।

## 8. धर्म में दृढ़ता

अर्जुनमाली का घोर उपसर्ग था, फिर भी युवक सुदर्शन चलित नहीं हुआ....। अपने दिल में अखंड आस्था का दीप संजोये वह भगवान महावीर स्वामी की वाणी सुनने के लिए निकल पड़ा....। सामने मुद्गर उछालता हुआ अर्जुनमाली आया। धर्म में दृढ़ आस्था वाला सुदर्शन काउसग में खड़ा रह गया....। अर्जुनमाली की देह में रहा हुआ यक्ष नौ-दो ग्यारह हो गया....। धर्म में दृढ़ता धारण करते वक्त सुदर्शन ने शातावेदनीय कर्म बाँधा।

## 9. अकाम निर्जरा

सहन करके कर्म क्षय करने की इच्छा न हो....अर्थात् अनिच्छा से भी जो समभावपूर्वक कष्ट सहन करे, उसे भी शातावेदनीय कर्म

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 98

बँधता है। धवलबैल ने फटके सहन किये, मरकर शूलपाणि यक्ष बना।

## 10. माता-पिता को नमस्कार

असहाय में सहायता करने वाले माता-पिता को नमस्कार करने से शातावेदनीय का बँध होता है। माँ-बाप का उपकार अनगिनत है। अपना जीव जब से गर्भ में प्रवेश करता है, तब से माँ-बाप के उपकारों का सिलसिला शुरू हो जाता है।

माता के शरीर से मांस-खून और मज्जा की प्राप्ति है, तो पिता की देह से हड्डी, बाल, रोंगटे, नाखून आदि मिलते हैं।

बालक गर्भ में रहता है, तभी से माता को कई संयम रखने पड़ते हैं।

1. अत्यन्त गरम वस्तु खा जाये - चाय आदि पी जाये, तो गर्भ बलहीन बनता है।

2. गुड़-घी आदि कफजनक वस्तुएँ ज्यादा खा जाये, तो बच्चे को पांडु रोग हो जाता है।

3. सूँठ आदि पित्तजनक खा जाये तो बच्चा बीमार रहता है।

4. वायुकारक पदार्थ खा जाये तो बच्चा कुब्ज बनता है।

5. दिन में गर्भवती माँ सो जाये तो बच्चा सोने की आदत वाला आलसी बनता है।

6. ज्यादा स्नान, विलेपन, पफ-पाउडर-लिपस्टिक आदि लगाये, तो गर्भ दुराचारी बनता है।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /99

7. माता स्वयं तेल की मालिश करे तो बच्चा रोगिष्ठ बनता है।

8. माँ रोती है तो बच्चा टेढी आँख वाला बनता है।

इनमें से एक भी दोष...खामी हमारी काया में नहीं है...बल्कि वह सर्वांग सुंदर है। इससे सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि हमारी माँ ने कितना संयम रखा था। पिता का भी अनहद उपकार है। माँ के दोहले की पूर्ति धन के बल पिता ही तो करते हैं। जिससे माता की निराशा गर्भ पर अपना बुरा प्रभाव न डाले।

जन्म देने के बाद भी माँ ने कैसी-कैसी सावधानी रखी। दिन-रात आपकी चिंता उसे सताती थी....कभी प्यास....कभी भूख....कभी लेटरीन....कभी पेशाब.... आपकी हर फरमाईश की पूर्ति माँ खड़े पाँव करती है।

(न करे तो आप कहाँ चुप बैठने वाले थे...!-आप तो अपना राग अलापने लगते....माँ को तंग कर देते)

और इतना ही नहीं....

आप छोटे थे....आप असहाय थे.....अपनी रक्षा आप स्वयं नहीं कर पाते थे...माँ Body Guard बनी, उसने अपनी ड्यूटी Day and Night रखी....वरना.....

कौआ आकर अगर आँखों में चोंच मारता तो आज किसी ब्रेडल लिपि के चक्कर में होते.....रोड़ पर असहाय चलने वाले अंध सूरदास कहलाते....

बिल्ली आकर कान खा जाती तो सूत देखने जैसी होती....होंठ खा जाती तो मुँह से शब्द नहीं निकलते....परमात्मा-पिता-महावीर शब्द बोल नहीं पाते.....

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /100

अभ्यास न कराया होता तो आज आप 'काला अक्षर भैंस बराबर' ! इस 'रे कर्म ! तेरी गति न्यारी' पुस्तक को भी पढ़ नहीं पाते..... न सुबह उठकर परमात्मा के दर्शन करने जाते या किसी भी समाचार-पत्र को पढ़ पाते.....बिल्कुल गँवार कहलाते जंगली...अंगूठा छाप !!

यह सब उपकार माँ-बाप का है....उनका विनय-नमस्कार, सामने नहीं बोलना - धर्म में अबाधक ऐसी हर छोटी-मोटी आज्ञा पालन आदि करने से शातावेदनीय कर्म बंधता है ।

## अशातावेदनीय कर्म बंध हेतु

शातावेदनीय बंध के हेतुओं से ठीक विपरीत अशातावेदनीय कर्मबंध के कारण हैं ।

जैसे गुरु के प्रति तिरस्कार, क्रोध, निर्दयता, व्रत का खंडन, अशुभयोग, कषायों की पराधीनता, कृपणता, माता-पिता के प्रति तिरस्कार आदि ।

माता-पिता को घर से निकालने वाले भयंकर अशातावेदनीय कर्म बान्धते हैं। आज अपने देश में वृद्धाश्रम बढ़ते जा रहे हैं, हाऊस फूल चल रहे हैं, यह इस देश के सांस्कृतिक अधःपतन की निशानी है ।

धरती मैया को पूछा गया- क्या पर्वतों के भार से दबकर तुम फटती हो ? तब उसने जवाब दिया- मुझे पहाड़ों का भार बिल्कुल नहीं लगता....मैं तो तब फटती हूँ जब इस दुनिया में विश्वासघाती और कृतघ्न लोग बढ़ जाते हैं ! वो मेरे से सहन नहीं होता ! आज घरों में कई लोग कुत्ते पालते हैं, बिल्ली पालते हैं....और जिसने उन्हें

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /101

पाला-पोसा....बड़ा किया....उसे घर से निकालते हैं....याद रखना....जो माता-पिता के दुःख दर्द आँसू पूछता नहीं, उसके आँसू को कोई पूछने वाला नहीं मिलेगा। जो माता-पिता को परेशान करता है, उसे कहीं चैन नहीं मिलेगा। बंगलों के नाम 'मातृ-आशीष, पितृ-आशीष या मातृ-सदन, पितृ-सदन, मातृ-छाया, पितृ-छाया, माय-मदर, माय-फादर' लिखने मात्र से काम नहीं चलेगा....।

हृदय में सद्भाव का दीप जलना चाहिये....।

ठाणांग-सूत्र में कहा है कि माता-पिता का ऋण कभी चुका नहीं सकते।

Honour thy Mother and Father. -Bible

'मातापित्रोश्च पूजकः' -वेदशास्त्र

माता पिता के चरणों में जन्नत है। -कुरान

'मदर इज मदर, बाकी सब अदर'

जननी नी जोड सरवी नहीं जडे रे लोल....

जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी....

स्वर्ग से भी ज्यादा महिमामयी है माँ....

ऐसे उपकारी माता-पिता के उपकारों को सदैव याद रखने वाला कृतज्ञ है, शाता बंध का कारक है। अपनी चमड़ी के जूते बनाकर उनके चरणों में धर दो....तो भी उपकार का बदला चुका नहीं सकते। मात्र उन्हें धर्म के मार्ग पर जोड़े या आगे बढ़ाये तो ही उपकार का बदला चुकाया जा सकता है।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 102

जो उपकार को नहीं मानता या भूल जाता है, वह कृतघ्न है।  
वह भयंकर अशातावेदनीय बंध है।

अब हम मोहनीयकर्म के अवांतर भेद और उनके बंध हेतु  
बतायेंगे।



रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /103



## मोहनीय कर्म के भेद और बंधहेतु

### मोहनीय कर्म के 28 भेद

1. दर्शन मोहनीय- जो मोहनीय कर्म सम्यग्दर्शन (श्रद्धा) को रोकता है। उसके भेद बतायें जायेंगे।
2. चारित्र मोहनीय- जो मोहनीय कर्म चारित्र-विरति को रोकता है।

### दर्शनावरणीय के तीन भेद

दर्शनावरणीय के तीन भेद हैं- 1. मिथ्यात्व मोहनीय 2. मिश्र मोहनीय और 3. सम्यक्त्व मोहनीय।

#### 1. मिथ्यात्व मोहनीय

जिस मोहनीय कर्म के उदयसे वीतराग परमात्मा अरिहंतदेव द्वारा बताये गये तत्त्वों पर श्रद्धा न हो....अन्यान्य द्वारा बताई हुई बातों पर विश्वास हो...अतत्त्वों पर श्रद्धा हो।

#### 2. मिश्र मोहनीय

जिस मोहनीय कर्म के उदय से वीतराग परमात्मा द्वारा बताई हुई बातों पर न तो रुचि हो और न ही अरुचि ! बिल्कुल इन द मिडल !! जैसे- नालिकेर द्वीपवासी आदमी, जिसने कभी अन्न देखा ही न हो...उसको अन्न पर न तो रुचि ही होती है और न ही अरुचि !

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 104

### 3. सम्यक्त्व मोहनीय

जिस मोहनीय कर्म के उदय से आत्मा को वीतराग द्वारा बताई हुई बातों में संशय आदि हो जाय और जिसके उदय में रहते क्षायोपशमिक सम्यक्त्व हो सकता है, मगर क्षायिक सम्यक्त्व कदापि नहीं रहता....

#### चारित्रमोहनीय के पच्चीस भेद

चारित्रमोहनीय के पच्चीस भेद हैं। सोलह कषाय + नौ कषाय = पच्चीस।

**कषाय** : जिससे संसार का लाभ हो। कष=संसार आय=लाभ अर्थात् जिससे संसार का परिभ्रमण बढ़े।

**नो-कषाय** : जो कषाय को प्रेरणा करे अथवा कषाय का सहचर हो।

#### सोलह कषाय

चार अनंतानुबंधी कषाय-

जिसके उदय से एक साल से अधिक और यावज्जीव तक कषाय रहे, उसे अनंतानुबंधी कषाय कहते हैं (याद रखिये, संवत्सर प्रतिक्रमण करने के पहले-पहले यदि आपने मिच्छामि दुक्कडं दे दिला कर कषायों की चलो छुट्टी कर दी तो...ठीक है, वरना आपका कषाय अनंतानुबंधी हो जायेगा...अपनी नोट में लिख लीजिये.....अनंतानुबंधी कषाय वाला व्यक्ति अपने ही हाथों जैनशासन के बाहर हो जाता है।)

इस अनंतानुबंधी कषाय के चार भेद हैं.... 1. क्रोध 2. मान 3. माया 4. लोभ।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /105

1. अनंतानुबंधी क्रोध पहाड़ में पड़ी दरार के समान है, जो दुष्पूर है, ऐसे क्रोध को अनंतानुबंधी कहते हैं।

2. अनंतानुबंधी मान पत्थर के स्तम्भ के समान है। जो कभी झुक नहीं सकता....मुड़ नहीं सकता...उसी तरह अनंतानुबंधी मान वाला इंसान कभी नम्र नहीं बनता है।

3. अनंतानुबंधी माया बांस की जड़ों के समान है...जो कभी सीधी नहीं होती है। उसी तरह अनंतानुबंधी माया वाला व्यक्ति कभी सरल नहीं होता है।

4. अनंतानुबंधी लोभ मजीठ के रंग के समान है...जो अमिट रहता है। अनंतानुबंधी लोभ वाले जीव की भी लालच कभी मिटती नहीं है। शेयर-सट्टा बाजार वाले लोभ के चक्कर में कैसे आँधे मुँह गिरते हैं ? यह सर्व विदित है।

अनंतानुबंधी कषाय सम्यक्त्व के घातक हैं....अर्थात् दिन-रात सा उन दोनों के बीच वैर है....अनंतानुबंधी कषाय है, वहाँ सम्यक्त्व नहीं....और सम्यक्त्व है वहाँ अनंतानुबंधी कषाय नहीं...

अनंतानुबंधी कषाय से संसार का अनुबंध पड़ता है....संसार का चक्कर बढ़ता है।

## चार अप्रत्याख्यानावरण कषाय

जिसका उदय चार महिने से अधिक और वर्ष के अंदर-अंदर समाप्त हो जाय....उसे अप्रत्याख्यानावरण कषाय कहते हैं।

अनंतानुबंधी से इसकी मात्रा अल्प होती है। इस कषाय से देशविरति का घात होता है। उसके चार भेद हैं।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 106

1. अप्रत्याख्यानावरण क्रोध जमीन में पड़ी दरार के समान है। बारह महिनो में बारिश आने पर वह पूरी हो जाती है। उसी तरह अप्रत्याख्यानावरण क्रोध ज्यादा से ज्यादा बारह महिने तक ही रहता है। अर्थात् बारह महिने के अंदर-अंदर यह क्रोध समाप्त हो जाता है।

2. अप्रत्याख्यानावरण मान हड्डियों के स्तंभ के समान है।

3. अप्रत्याख्यानावरण माया भेड़ के सींग के समान है।

4. अप्रत्याख्यानावरण लोभ बैल की गाड़ी की मली जैसे है।

चार प्रत्याख्यानावरण कषाय जिसका उदय चार महिने तक रहता हैं। उसे प्रत्याख्यानावरण कषाय कहते है। अर्थात् पन्द्रह दिन से ऊपर रहे और चार महिने के अंदर-अंदर समाप्त हो जाय।

1. प्रत्याख्यानावरण क्रोध बालू में पड़ी हुई रेखा के समान...

2. प्रत्याख्यानावरण मान काठ का थंभा...

3. प्रत्याख्यानावरण माया गोमूत्रिका जैसी....

4. प्रत्याख्यानावरण लोभ काजल के रंग जैसा....

## चार संज्वलन कषाय

1. संज्वलन क्रोध : पानी में पड़ी दरार...रेखा के समान

2. संज्वलनमान : बेंत की छड़ी के समान

3. संज्वलन माया : बांस की लकड़ी के छाला के समान

4. संज्वलन लोभ : हल्दी के रंग जैसा...

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /107

इस तरह कषाय के सोलह भेद हुए....

## नौ कषाय के नौ भेद

1. हास्यमोहनीय : जिस कर्म के उदय से....किसी कारणवश या अकारण ही हँसना आए....

2. रति मोहनीय : जिसके उदय से मन पसंद वस्तु मिलने पर खुशी हो....

3. शोक मोहनीय : जिसके उदय से जीव इष्ट वस्तु के वियोग में रोने लगे....सिर पटके निःश्वास छोड़े आदि....

4. अरति मोहनीय : जिसके उदय से मन को अपसंद हो वैसी वस्तु की प्राप्ति में अप्रीति हो....

5. भय मोहनीय : जिसके उदय से किसी निमित्त को लेकर या निमित्त बिना ही भय उत्पन्न हो....

6. दुगुंछा मोहनीय- जिसके उदय से अच्छी-बुरी, सुंदर-असुंदर चीजों पर दुगुंछा पैदा हो....

7. पुरुषवेद : जिसके उदय से स्त्री को भोगने की इच्छा पैदा हो....

8. स्त्रीवेद : जिसके उदय से पुरुष को भोगने की इच्छा पैदा हो।

9. नपुंसकवेद : जिसके उदय से स्त्री-पुरुष दोनों को भोगने की इच्छा उत्पन्न होती है।

इस दृष्टि से हिट्रोसेक्स्योलिटि, होमोसेक्स्योलिटि, बीसेक्स्योलिटि लेस्बीयन का आधुनिक वर्गीकरण पूर्वोक्त तीन भेद

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 108

में खूब आसानी से हो सकता है। उस-उस वेदमोहनीय कर्म के उदय से उस-उस प्रकार की इच्छा उत्पन्न होती है।



मोहनीय कर्म के  $3+16+9=28$  भेद हुए। बंध के कारण निम्न हैं।

## 1. उन्मार्ग देशना

मोक्षमार्ग से विरुद्ध मार्ग की देशना देना.... उपदेश देना.... जैसे तीसरे भव में भगवान महावीर स्वामी के जीव त्रिदंडिक, मरिचि ने कपिलनामक राजकुमार को उन्मार्ग देशना देते हुए कहा कि- 'कविला ! इत्थंपि इहयंपि' भगवान ऋषभदेव के पास भी धर्म

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /109

है और मेरे पास भी...' इन वचनों से दर्शनमोहनीय कर्म बंध गया और एक कोडा-कोडी सागरोपम का संसार बढ़ गया.....

## 2. मार्ग का नाश करना

अर्थात् दर्शन-ज्ञान-चारित्र्य रूपी मोक्ष मार्ग का अपलाप करना...हँसी उड़ानी...और कहना....'मोऽऽऽऽक्ष ! किसने देखा है, चारित्र्य से मोक्ष मिलता है ?' कंदमूल में अनंतजीव है....कैसे पता चलता है ? इत्यादि नाना प्रकार से अपनी और औरों की श्रद्धा नष्ट-भ्रष्ट करनी।

## 3. देवद्रव्य का हरण

देवद्रव्य का उपयोग-उपभोग करना....। उससे कमाई करनी...चंदे में लिखाया हुआ....मंदिर का पैसा.....पूजा-प्रतिष्ठा आदि की बोलियाँ जल्दी नहीं भरना.....इससे दर्शनमोहनीय का बंध होता है।

कई अज्ञान लोग मंदिर के पैसों से स्कूल बनवाते हैं....सराय....धर्मशालाएँ.....बनवाते हैं....। बनवाने वाला भी पाप से भारी होता है और उसमें उतरने वाला भी ! उपाश्रय-स्थानकों में जहाँ-जहाँ देवद्रव्य लगा है.....बहुधा देखा गया है....अशांति की भयंकर आग घर-घर में लग गई है....गाँव की चैन की नींद कोसों दूर भाग गई है। और ब्याज सहित देवद्रव्य में भरपाई करते ही पुनः सुख शांति हो जाती है।

प्रतिष्ठा आदि में जितनी शक्ति हो उतनी ही बोलियाँ लगानी चाहिये और ईमानदारी यह है कि प्रभु के पैसे भरने के बाद ही उस बोली का लाभ उठाना चाहिये....नहीं तो कहीं प्रतिष्ठा को बीस-

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 110

बीस साल हो गये हैं, पैसे भरे ही नहीं ! भयंकर कर्मों का बँध होता है....

भाग्यशालियों ! आज ही सही...देवद्रव्य की यदि एक पाई भी बाकी निकलती हो तो ब्याज सहित भरपाई करने का दृढ संकल्प कर लीजिये और अपने गाँव में.....अड़ोस-पड़ोस में इस बात को समझाने का मन में निश्चय कीजिये ।

वरना, देवद्रव्य के भक्षण से भयंकर दुर्गति होगी....! अपार कष्ट सहना पड़ेगा !! जन्म-जन्मान्तर तक यह पाप पीछा करेगा !!!

## देवद्रव्य के भक्षण से पशु बनना पड़ा

देवसेन की माता ने प्रभु को अर्पण किये हुए दीये के प्रकाश में घर का काम किया और धूप के अंगारे से चूल्हा सुलगाया....इस प्रकार देवद्रव्य का उपभोग किया, जिससे देवसेन की माता मर कर ऊँटनी बनी ।

(सायं होते ही मंदिर के बाहर मन्दिर के ओटले पर बैठ कर गप-शप लड़ाने वाले सावधान! इस देवद्रव्य का उपभोग कर आपको भी कहीं ऊँ.....बनना न पड़े !!)

वह ऊँटनी प्रतिदिन देवसेन के घर के बाहर आकर खड़ी रहती थी...

एक बार देवसेन ने ज्ञानी गुरुभगवंत को इसका कारण पूछा । तब गुरुभगवंत ने देवद्रव्य का अपने घरेलू कार्यों में तुम्हारी माँ ने उपयोग किया....दर्शन मोहनीय कर्म बाँधा और दुर्गति हुई....ऊँटनी का जन्म मिला....ऊँटनी के कान में देवद्रव्य के नाश के वृत्तान्त की

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 111



बात कह कर देख..' इस पर देवसेन ने ऊँटनी के कान में जाकर कान में सारी बातें कह सुनाई।

सुनते ही उसे जातिस्मरण ज्ञान हो गया। पूरा पूर्व भव फिल्म की दृश्यावलियों की तरह उसकी चेतना में उभरने लगा....उसे अपार पश्चात्ताप हुआ....सचित्त का त्याग कर आलोचना लेकर...अपनी आयु समाप्त कर वह ऊँटनी देवगति में उत्पन्न हुई।

## देवद्रव्य से कमाई

साकेतपुर में एक सेठ रहते थे। उनका नाम सागर सेठ था। गाँव के लोगों ने मंदिर बाँधने वाले कारीगरों को वेतन देने का काम सागरसेठ को सौंपा। सागरसेठ वेतन में रुपये देने की जगह अपनी दुकान से दैनिक काम में आये, वैसी आवश्यक खान-पान की चीजें घी-गुड़-तेल-आटा आदि बाजार भाव से सस्ता देते थे।

इस व्यापार में उन्हें रुपये 12.30 की आय हुई। इससे उन्हें दर्शनमोहनीय कर्म बँध गया। तिर्यंच आयुष्य बँध गया। अतः सेठ वहाँ से मरकर अंडगोलिक (जल मनुष्य) मत्स्य हुए। बारह महिने तक उसे चक्री में पीसा गया। अंडगोली निकलने के बाद अंत में मर गया।

फिर नरक-मछली-चौथी नरक-एक-एक भव कर सातों नरकों में गया। उसके बाद सुअर, बोकड़ा, बकरी, हिरन, खरहा, साबर, सियार, बिल्ली, चूहा, छिपकली आदि के एक-एक हजार भव किए। फिर कुछ कर्म क्षीण-सा हुआ, अतः मनुष्य जन्म मिला। जन्म होते ही उसके फूटे भाग्य ने अपना प्रभाव बता दिया। माता-पिता का वियोग हो गया। लोगों ने अभागिये का यथार्थ नाम रख दिया। 'निष्पुण्यक(पुण्यहीन)।'

२ कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 112

अपने मामा के घर गया तो वहाँ रात को चोरों ने धावा बोला और माल-सामान साफ कर दिया। परदेश जाकर सेठ के यहाँ नौकरी के लिये रहा तो एक दिन सेठ की दुकान में आग लग गई। सेठ ने निष्पुण्यक को निकाल दिया। समुद्री रास्ते से अपने घर लौट रहा था कि जहाज डूब गया। बड़ी मुश्किल से एक लकड़ी का सहारा लेकर तैरते-तैरते जान बचाई।

गाँव के ठाकुर के वहाँ उसने अपना आना-जाना बढ़ा दिया तो ठाकुर के घर चोरों ने हमला किया और माल-सामान लूट कर ठाकुर को जान से खत्म कर डाला। निष्पुण्यक को उठाकर पत्नी में ले गये, तो दूसरे पत्नीपति ने धावा बोलकर इस पत्नी को सफाचट कर दी...। वापिस निष्पुण्यक को मार भगाया गया।

एक बार उसने इक्कीस उपवास कर एक यक्ष की आराधना की। यक्ष प्रसन्न हुआ। उसने कहा- 'शाम के समय मोर नृत्य करेगा...एक सुवर्ण पिच्छा ले लेना। इस तरह निष्पुण्यक ने नौ सौ पिच्छे इकट्ठे किये। सौ बाकी थे, धैर्य नष्ट हो गया.....सोचा..... एक-एक कर सौ कब पूरे होंगे ? एक साथ एक सौ पिच्छे क्यों न खींच लूँ ? उसने अपनी मूर्खता से खींचने की कोशिश की.....मोर भी गायब और नौ सौ पिच्छे भी गायब ! बेचारा अभागिया ! बहुत रोया....!

एक बार ज्ञानी गुरु मिले। ज्ञानी गुरु ने पूर्वभव का वृत्तान्त कह सुनाया। सुनकर निष्पुण्यक को घोर पश्चात्ताप हुआ और पाप की शुद्धि (12.30 रुपये के देवद्रव्य से आय का पाप सागर सेठ के भव में किया था) के लिए आलोचना माँगी। गुरु भगवंत ने कहा 'हजार गुना अर्थात् 12.30 हजार रुपये देवद्रव्य में अर्पित करने पर शुद्धि होगी। जब तक उतना द्रव्य भरपाई नहीं हुआ, तब तक भोजन

रे कर्म तेरी गति न्यासी....! /113

और पहिने के वस्त्र (निर्वाह) सिवाय जितना भी द्रव्य मिला देवद्रव्य में डालते हुए संपूर्ण ऋण मुक्त बन गया। तदन्तर उसने खूब पैसा कमाया....और वह देवद्रव्य का रक्षण करने लगा। नगर में जिनमंदिर बनवाया। दीक्षा ली। विंशस्थानक के प्रथम पद की सुंदर आराधना की और साथ ही जीव मात्र पर करुणा भाव लाया। 'सवि जीव करूँ शासन रसी' की मंगलमयी भावना और तप के बलबूते तीर्थकर नामकर्म बाँधा। महाविदेह में तीर्थकर बनकर मोक्ष में पधारे।

उपर्युक्त उदाहरण सत्य घटना है। इस पर चिंतन-मनन कर पूरा ध्यान रखना जरूरी है, कहीं हमारे घर में तो अनजान से भी देवद्रव्य का भक्षण तो नहीं हो रहा है ! देवद्रव्य के भक्षण से भयंकर दुर्गति निश्चित है।

## चंदे का देवद्रव्य जल्दी नहीं भरा तो...

ऋषभदत्त श्रावक भुलकड़ थे। देवद्रव्य के चंदे में पैसे लिखाये और भूल गये। सेठ को दर्शन मोहनीय बँध गया।

एक बार चोरों ने सेठ के घर चोरी की....और रातों-रात सेठ का काम तमाम कर दिया। सेठ मरकर भैंसा बनें।

पशु का भव था....मार-पीट सहनी पड़ती थी....एक बार मंदिर के काम में उसको लगाया गया। पानी चढ़ाना...उसका काम था। परमात्मा की पूजा देखकर उसे जातिस्मरण ज्ञान हुआ। ज्ञानी के वचन से सेठ के लड़के ने भैंसे को छुड़वाया और एक हजार गुना द्रव्य देकर देवद्रव्य के ऋण से मुक्त किया।

अनशन कर भैंसा देवलोक में गया।

रे कर्म तेरी गति न्यासी...!! (114)

इस घटना से बोध लेना चाहिये कि देवद्रव्य रकम की तुरंत भरपाई कर देनी चाहिये....विलंब कभी नहीं करना चाहिये....वरना, रह गया तो ऋषभदत्त की तरह दर्शन मोहनीय बाँधकर भैंसा-गधा जैसी तिर्यच योनियों में जाने की नौबत आ जायेगी।

## चौथा कारण

जिनमूर्ति, जिनप्रतिमा, चैत्य-संघ-गुरु-श्रुत-ज्ञान आदि के अवर्णवाद-आशातना-निंदा आदि करने से दर्शन मोहनीय कर्म बंधता है। श्री जिनमूर्तिपूजा और दर्शन का निषेध करने वाले सावधान ! आप अपने इस भयंकर अपकृत्य से गाढ दर्शन-मोहनीय कर्म बाँध कर दुर्गति के द्वार स्वयं खोल रहे हैं !!

## चारित्र मोहनीय कर्म बंध के हेतु

कषाय, हास्यादि, नो कषाय और विषय की पराधीनता से दोनों प्रकार के (कषायमोहनीय और नो कषाय मोहनीय) कर्म बंधता है। अब हम आयुष्य कर्म के विषय में सोचेंगे।



रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /115

## आयुष्य कर्म के भेद और बंध हेतु

आज हमें आयुष्य कर्म के चार भेद के बारे में सोचना है-

### 1. नरकायुष्य कर्म

जिस कर्म के उदय से जीव को अमुक काल तक नरक में ही रहना पड़े। वह जीव वहाँ से निकल-भागने की खूब इच्छा करता है, मगर वह भाग नहीं पाता.....पल-पल मौत की झंखना करता है, मगर मौत उससे कोसों दूर रहती है....वहाँ की आयु पूर्ण होने पर ही अगले भव में जीव जा सकता है।

### 2. तिर्यचायुष्य कर्म

जिस कर्म के उदय से जीव को अमुक समय तक तिर्यच योनि में उत्पन्न होकर रहना पड़े....एकेन्द्रिय से लगाकर पशु-पक्षी आदि पंचेन्द्रिय तक सभी इस तिर्यच योनि में समाविष्ट है।

### 3. मनुष्यायुष्य कर्म

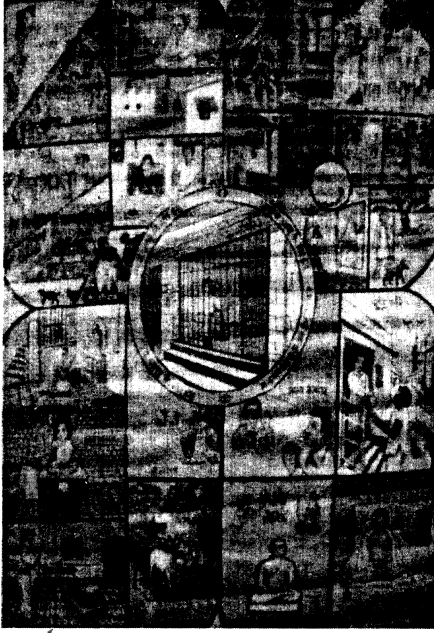
जिस कर्म के उदय से जीव को अमुक समय तक मनुष्य भव में रहना पड़े.....

### 4. देवायुष्य कर्म

जिसके उदय से जीव को अमुक मर्यादित समय तक देवभवं में रहना पड़ता है। आयुष्य पूरा होने पर चाह कर भी चिपके नहीं रह सकते....सीट खाली करनी ही पड़ती है।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /116

## आयु बन्ध के हेतु कौनसे हैं ?



## आयुष्य कर्म के बंध हेतु नरकायुष्य कर्म के बंध हेतु

1. महापरिग्रह में आसक्त : अमर्यादित परिग्रह में आसक्त रहने वाला....जो भी होता है वह नरकायुष्य बाँधता है। मम्मण सेट को सातवीं नरक के दरवाजे पर दस्तक लगानी पड़ी....अथाह धन.....हीरे से जड़ित बैलों की जोड़ी यहीं पड़ी रही और नारकीय यातनाएँ मम्मण को आज भी सहनी पड़ रही है....उसकी आर्त्त चीखें आज भी हमें बहुत कुछ सोचने पर मजबूर कर देती हैं।

2. महा-आरंभ में आसक्त : महा-आरंभ में आसक्त कालसौकरिक कसाई मरकर सातवीं नरक में गया....

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /117

मछली का एक्सपोर्ट-इम्पोर्ट करने वालों ! मांस का निर्यात करने वालों ! सावधान हो जाओ....वरना कर्मसत्ता तुम्हें माफ नहीं करेगी....सजा देने के लिए उसके पास नरक की पासपोर्ट तैयार है... !!

**3. रौद्र परिणाम :** कंडरिक ने एक हजार वर्ष तक चास्त्रि पालन किया....वापिस गृहस्थ बन गया। बड़े भाई पुंडरिक ने दीक्षा ली और कंडरिक को राज्य सौंप दिया....रस लोलुपता से कंडरिक ने खूब खाया....'यह भ्रष्ट है....खाने की भी तमीज नहीं.....कौन इसकी सेवा करें ?' इस प्रकार मंत्रियों की उपेक्षा देखकर भयंकर रौद्र परिणाम आया....यदि कल ठीक हो जाऊँगा तो... एक-एक का मस्तक धड़ से अलग कर दूँगा....रात्रि में ही मरकर सातवीं नरक में गया।

**4. झूठ का तीव्र परिणाम :** वसुराजा ने जानते हुए भी अशुभ अध्यक्षियों से झूठ बोला....सफेद झूठ ! 'अज का अर्थ बकरा होता है' झूठ के कारण मरकर सातवीं नरक में गया।

**5. अन्य कारण :** पंचेन्द्रिय हत्या (गर्भपात भी पंचेन्द्रिय हत्या कहलाती है), रात्रि भोजन (नरक का प्रथम द्वार) जमीकंद, अचार आदि अभक्ष्य भोजन, परस्त्री वेश्यागमन आदि से भी नरकायु बँधती है।

## तिर्यच आयुष्य कर्म के बंध हेतु

### 1. आर्तध्यान-

इष्ट संयोग-अनिष्ट वियोग-वेदना-नियाणा ये सभी आर्तध्यान कहलाते हैं।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /118

## सुकोशल मुनि की माँ

अयोध्या के राजा कीर्तिधर गवाक्ष में बैठे सृष्टि का सौंदर्य निहार रहे थे। अमावस्या के दिन सूर्यग्रहण हो रहा था। सूर्यग्रहण देख कीर्तिधर राजा को वैराग्य आ गया। सुकोशल का राज्याभिषेक कर चारित्र ले लिया।

एक बार विचरण करते हुए राजर्षि अयोध्या पधारे। उन्हीं की पत्नी सहदेवी ने देख लिया....ओह ! गजब हो जायेगा...यदि इनके संपर्क में मेरा लाल सुकोशल आ गया तो वह दीक्षा ले लेगा, तो फिर मुझे राजमाता कौन पुकारेगा ? इस मोह से अधीन होकर उसने आदेश जारी कर दिया कि सभी संत-संन्यासियों को गाँव के बाहर निकाल दो।

एक सैनिक डंडा घुमाता हुआ कीर्तिधर मुनि को निकालने लगा...यह दृश्य सुकोशल की धावमाता ने देख लिया....उसकी आँखें बरबंस टपकने लगी। सुकोशल ने कारण पूछा। पिता का वृत्तांत सुनाया, 'माफी माँग कर आता हूँ' कहकर सुकोशल पिता मुनि के चरणों में गिर पड़ा....

'राजेश्वरी सो नरकेश्वरी' का पाठ सुनाकर सुंदर वैराग्य का उपदेश दिया। गर्भवती पत्नी के गर्भ का राज्याभिषेक कर माँ की मनाही के बावजूद सुकोशल ने दीक्षा ली। सहदेवी का इकलौता बेटा था, फिर भी दीक्षा ली। सहदेवी 'हाय ! मेरा पुत्र गया' आर्तध्यान में मरकर बाधिन बनी.....चूँकि आर्तध्यान से तिर्यचयानि प्राप्त होती है।

चार महिने के उपवासी दोनों मुनि सिद्धगिरिराज से नीचे उतर रहे थे कि सामने से भूखी बाधिन गर्जना करती हुई

रे कर्म तेरी गति न्यासी...!! /119



आई.....'जहाँ राग ज्यादा, वहाँ द्वेष ज्यादा' सुकोशल पर पंजा मारा.....तड़-तड़ नसें तोड़कर लोही-मांस चट-चट और चब-चब कर आरोगने लगी.....मुनि धर्मध्यान से शुक्लध्यान और शुक्लध्यान से केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष में पहुँच गये... और इधर उसने मुनि का मुँह फाड़ा..... सोने के दाँत देखे.....जातिस्मरण हुआ.....अपार पश्चात्ताप हुआ....

ओह ! धिक्कार हो मुझ पापिणी को....जिसने अपने ही पुत्र का खून पीया.....मांस खाया...! अनशन कर बाधिन देवलोक में गई। कीर्तिधर मुनि को भी केवलज्ञान हुआ....मोक्ष में पधारे।

## 2. ब्रह्मचर्य में दोष लगाना

रूपसेन के जीव ने आँख के पाप से ब्रह्मचर्य में दोष लगाया...तो उसे सर्प-हंस-हिरन आदि तिर्यच के भव मिले....ब्ल्यू फिल्म....न्यूड फिल्म....एडल्ट पिकचर्स और गंदी फिल्में (लगभग सभी फिल्में कही जा सकती हैं) फिल्मी पत्र-पत्रिकाओं के द्वारा आँख के पाप से सने हुए युवकों ! सावधान बन जाओ....तिर्यच योनि में आज के युग में तो और भी ज्यादा दुःख है....

तिर्यच बनो उतनी ही देर है.....सरकार ने योजना बना रखी है, अलग-अलग तौर-तरीकों से मारने की....मछली बनोगे तो मत्स्योद्याग में मरोगे....मुर्गी के अंडे बनोगे तो 'संडे हो या मंडे' का धूम प्रचार कर तुम्हारा अस्तित्व ही मिटा देंगे....!

अतः प्यारे नौजवानों ! अपने ही हाथों मरने के धंधों को छोड़ो...एक्ट्रेसों के फोटो जेब में से निकाल फैंको.....लड़कियों का पीछा करने की आवारागर्दी छोड़ो....

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /120

आँख से पाप घुसता है और शरीर प्रभावित होता है....जीवन का ओज खत्म होता है....

अतः ब्रह्मचर्य का पालन न कर सके तो स्वदारा संतोष-व्रत....एक पत्नी व्रत रखना चाहिए....परनारी, प्रोस्टीट्यूट्स, कॉल गर्ल्स (वेश्याएँ) का सर्वथा त्याग....वरना तिर्यच योनि तैयार है....!

### 3. माया

हृदय में ऐसी गूढता रखनी....बात छुपाकर रखनी....‘मुँह में राम बगल में छुरी’ वाला हिसाब रखना....औरों को बात की गंध तक न आये....

माया से तिर्यचगति प्राप्त होती है....तत्त्वार्थ सूत्र में श्री उमास्वाति म. ने कहा है - ‘माया तैर्यग् यौनस्य’

### एक तबाही की कहानी

रुद्रदेव की पत्नी का नाम था अग्निशिखा । तीन पुत्र थे, डुंगर, कुडंग और सागर । उनकी पत्नियाँ क्रमशः शिला, निकृति और संचया थी ।

घर में हमेशा सास-बहू, जेठानी-देवरानी, पिता-पुत्र, पति-पत्नी की एक न एक महाभारत सीरियल तैयार हो ही जाती थी । रामायण सीरियल की भी शूटिंग हो जाया करती थी । पूरा घर क्लेशमय बन गया था । अशांति की आग में सभी झुलस रहे थे ।

एक दिन रुद्रदेव ने सोचा....मेरे मरने के बाद अग्निशिखा का क्या होगा ?

सभी बाहर गये हुए थे । दरवाजा बंदकर अग्निशिखा को एक

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /121

हजार सोनामहोर हाथ में थमा दी.....और कहा- किसी जगह गाड़ दो !

यह मंत्रणा निकृति ने छुपकर सुन ली। उसने जाकर संचया को बात कही...करो सेवा तो मिले मेवा ! दूसरे दिन से दोनों बहुरानियाँ सास की सेवा में लग गई.....कृत्रिम आँसू बहाये.....माफी माँगी और सुंदर रूप से सेवा करने लगी।

बुढ़िया ने भोले भाव से सोचा....मरने के बाद सोनामहोर मेरे क्या काम की ? उसने दोनों को जगह बता दी। राज चाहिये था सो मिल गया....

एक दिन सास कहीं बाहर गई हुई थी। दोनों बहुओं ने सोनामहोर निकाल ली और अन्य स्थान पर गाड़ दी। अब सेवा धीरे-धीरे बंद हो गई....सास ने देखा...कहीं गड़बड़ तो नहीं हुई ? 'खेल खत्म, पैसा हजम' सोना महोर गायब थी.....!

रुद्रदेव को इस बात का पता चला....वह आग बबूला हो उठा। तीक्ष्ण हथियार से उसने अग्निशिखा पर प्रहार किया....अग्निशिखा मरकर सर्पिणी बनी और उसी घर में घूमने लगी।

निकृति ने सोचा मेहनत मैंने की....आधा भाग संचया को क्यों दूँ ? लड़्डू में जहर मिलाकर संचया को खिलाया। उधर संचया मरकर कुत्ती बनी और इधर निकृति अंधेरे कमरे में छिपाये गये स्थान पर धन निकालने के लिए हाथ डालती है, सर्पिणी उसे डस लेती है। माया के कारण मरकर निकृति नोलवण बनती है।

कषायों से पूरे घर की तबाही हो गई....निकृति को माया के कारण तिर्यच योनि में जाना पड़ा।

रे कर्म तेरी गति न्यासी...!! / 122

## सशल्यता

मन में कामवासना आदि किसी भी प्रकार का शल्य रखकर...उस पाप को छुपाकर प्रायश्चित किया हो तो, उस शल्य के कारण तिर्यच आयुष्य बँधता है।

## कमलश्री

शिवभूति और वसुभूति नाम के दो भाई थे। बड़े भाई की पत्नी कमलश्री अपने देवर वसुभूति के प्रति आकर्षित हुई। कमलश्री ने अनुचित प्रार्थना की। भाभी की कामवासना देखकर वसुभूति को पूरे संसार से घृणा हो गई...और उसे वैराग्य हो गया। वसुभूति ने गुरुचरणों में जाकर चारित्र अंगीकार कर लिया।

कमलश्री को पता लगा तो वह और अधिक व्यथित हो उठी...वह आर्तध्यान करने लगी....देवर के प्रति कामराग जो था। मानसिक-वाचिक आलोचना न लेने के कारण तिर्यच आयुष्य बाँधा और मरकर कुत्ती बनी।

एक बार उसी गाँव में वसुमति मुनि आये और गोचरी निकले। कुत्ती ने मुनिश्री को देखा.....और पूर्वभव के राग के संस्कारों के कारण वह छाया की भाँति साथ चलने लगी। लोगों ने महाराज का नाम बिगाड़ दिया.....उन्हें शुनीपति (कुत्तीपति) कहने लगे।

नजर चुका कर महाराजश्री अन्यत्र चले गये। कुत्ती मुनि को न देख, आर्तध्यान में मरकर वानरी-बंदरी हुई। मुनि को देखकर वह भी साथ-साथ चलने लगी....कुचेष्टाएँ करने लगी। लोग उन्हें वानरीपति कहकर पुकारने लगे। मुनिश्री ने पुनः वो ही तरकीब अपनाई...नजर चुकाकर विहार कर गये। बंदरी आर्तध्यान में मरकर

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /123

किसी तालाब में हंसली बनी। शीतऋतु में वसुभूति मुनिश्री तालाब के किनारे कायोत्सर्ग में खड़े थे.....हंसली आ...आ कर उन पर पानी उछालने लगी....अव्यक्त मधुर शब्दों से विरहवेदना के स्वर निकालने लगी और मुनिश्री को आलिंगन में बाँधने की वैषयिक चेष्टायें करने लगी। मुनिश्री वहाँ से तुरन्त निकल गये। हंसली आर्तध्यान में रो-रो कर मर गई और व्यंतरी हुई। उसने अपने ज्ञान से वसुभूति मुनि और अपना पूरा संबंध देखा। 'वसुभूति ने मुझे टुकरा-टुकरा कर दुःखी किया....अब मैं इसे मजा चखाऊँगी' उसका तन-बदन क्रोध से काँपने लगा....।

मुनिश्री ध्यान में खड़े थे.....व्यंतरी ने भयंकर उपसर्ग किये...अनुकूल भी और प्रतिकूल भी.....!! मुनि मेरु की तरह अडिग रहे....उन्हें केवलज्ञान की प्राप्ति हुई। केवली भगवंत ने सशल्यता की भयंकरता लोगों को समझाई और कमलश्री का दृष्टांत दिया। मुनिश्री अनुक्रम से मोक्ष पधारे।

एक ही घर में मात्र कुदृष्टि रखने से कमलश्री को कितना भयंकर कष्ट भुगतना पड़ा.....और यदि गुरुभगवंत के पास शुद्ध मन से आलोचना प्रायश्चित कर लिया होता तो ? यह आफत खड़ी ही न होती। हम भी अपने आपको ऐसी कामवासनाओं से बचाये....और कदाचित् मोहनीय कर्म के उदय से दोष लग भी गये हो तो गुरु भगवंत के पास प्रायश्चित कर लें....बेड़ा पार हो जायेगा।

## मनुष्य आयुष्य के बंध हेतु

### 1. दान रूचि

स्वयं के पास धन हो या न हो...परन्तु दान देने की रूचि सतत जागृत रहे....वह मनुष्य आयु बाँधता है। जैसे- संगम को

रे कर्म तेरी गति न्यारी....!! /124

दान देने की उत्तम रूचि थी...अतः मनुष्य आयु बाँधकर वह शालीभद्र बना ।

## 2. अल्प परिग्रह

जिसके पास परिग्रह कम हो.....और महापरिग्रह की भावना - झंखना न हो ।

## 3. अल्पकषाय

क्रोध आदि कषाय अत्यन्त अल्प हो... ।

## 4. मध्यम गुण

विनय, सरलता, मृदुता, देव-गुरु की पूजा, अतिथि सत्कार आदि ।

## देवायुष्य कर्म बंध के हेतु

### 1. अविरति सम्यग्दर्शन

देव, गुरु एवं धर्म के ऊपर पूर्ण श्रद्धा.....अपार बहुमान.... अनन्य बहुमान आदि हो...जैसे कि देवपाल ! परमात्मा के दर्शन न हुए, आठ-आठ दिन तक भूखा रह गया.....!!

### 2. देशविरति

श्रावक के बारहव्रतों को धारण करना या उनमें से किसी एक को अंगीकार करना ।

### बंदरवैद्य

देहाती गाँव में एक वैद्यराज थे । धंधा जोरों से चल रहा था । एक बार सद्गुरु का योग मिला । गुरुभगवंत की वाणी ने जादुई असर किया.....जीवन में परिवर्तन आया । विचार किया कि 'ओह ! मेरे इस धंधे में वनस्पति आदि की भयंकर हिंसा करनी

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /125

पड़ती है....यह सोच उन्होंने वैद्यक धंधा छोड़ दिया। मुनिश्री विहार करके अन्यत्र चले गये।

इधर वैद्यराजजी का दूसरे धंधे में हाथ जमा नहीं। वैद्यराजजी के विचारों में गिरावट आ गई। वापिस 'वो ही रफ्तार' चालू कर दी....। वैद्यक धंधा चालू कर लिया। वनस्पति की हिंसा और मृत्युपर्यन्त आर्तध्यान के कारण आयुष्य पूर्ण कर वैद्यराजजी का जीव जंगल में बंदर बना।

एक बार मुनिराजश्री जंगल में से विहार करते थे। पाँव में एक जहरीला काँटा लग गया। लाख प्रयत्न करने पर भी वह निकल नहीं रहा था। बंदर ने यह दृश्य देखा.....मुनि को देखा.....और उसे जाति स्मरण हो गया। बंदर को अपना पूर्वभव दिखा....वैद्यक याद आया। वह दौड़ा और वनस्पति का रस उठा लाया....पाँव के तलुवे लगा दिया और काँटा खींच निकाला।

मुनि के संपर्क से बंदर को सुंदर आराधना के भाव जगे...और उसने देसावगासिक पच्चक्खाण ले लिया....'मुझे इस शिला को छोड़ कहीं भी अन्यत्र नहीं जाना।' मुनि विहार कर चले गये। भूखा बाघ आया...बंदर अपने नियम पर अडिग रहा....डर के मारे या जिंदा रहने की उत्कट इच्छा को संजोये वहाँ से दूम दबाकर भागा नहीं...! मर कर देव बना।

## सर्व विरति

सर्व विरति के पर्यायवाची नाम = चारित्र = दीक्षा = प्रव्रज्या = विरति।

सर्व विरति को लेकर सुंदर साधना कर धन्ना अनगार आदि कई महामुनियों ने देव आयुष्य बाँधा....(और परंपरा से मोक्ष में भी पधारेंगे)।

## बालतप

अज्ञान तप ! सम्यग्ज्ञान के अभाव में बालतप करके कई जीव देव आयुष्य भी बाँधते हैं। जैसे कि तामलि तापस-कमठ-अग्निशर्मा आदि।

## अकामनिर्जरा

बिना इच्छा से भी दुर्ध्यान न करते हुए आये हुए कष्टों को सहन करना। जैसे कि धवल नामक बैल ने अपने मालिक के प्रति वफादारी जताते हुए पाँच सौ बैलगाड़ियाँ खींच दी...चूँकि गाड़ियाँ फँस गई थी। संधिस्थान सभी टूट गये। मालिक को आगे जाना था, अतः उसने गाँव के लोगों को खूब पैसे दिये। लोगों ने विश्वास दिलाया कि इस वफादार बैल की उचित शुश्रुषा की जायेगी। मालिक निश्चित होकर चला गया।

मगर.....

गाँव के लोगों के नीयत में खोट आ गई। विश्वासघात कर, पैसे डकार गये, और बिमार बैल की सेवा-सुश्रुषा कुछ भी नहीं की। अनिच्छा से वह बैल भूख-प्यास और शारीरिक यातना को सहता हुआ देव आयुष्य को बांध कर शूलपाणि यक्ष बना। उपयोग देकर अपनी पूर्वावस्था देखी.....। वह क्रोध से पागल हो उठा....पूरे गाँव को उसने श्मशान बना डाला....गाँव का नाम पड़ गया.....अस्थिग्राम.....! भगवान महावीर वहाँ पर पधारे.....तब क्या हुआ ?

पर्युषण के दिनों में कल्पसूत्र का वाचन होता है....ध्यान से सुनेंगे तो इस रोचक कहानी का उत्तरार्ध वहाँ मिल जायेगा.....!



रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /127



## नामकर्म के भेद और बंध हेतु

आज के मंगल दिन शिविर की क्रमिक अध्ययन पद्धति को अनुलक्ष कर हमें नामकर्म के एक सौ तीन भेद संक्षेप में बुद्धिगोचर करने हैं.... उन पर सरसरी नजर दौड़ाते हुए विहंगावलोकन करना है।

नामकर्म के मुख्य चार भेद हैं - (1) पिंड प्रकृति (2) प्रत्येक प्रकृति (3) त्रस दशक (4) स्थावर दशक।

### पिंडप्रकृति

नामकर्म की जिन प्रकृतियों के उत्तर भेद हो, उन्हें पिंड-प्रकृति कहा जाता है। पिंडप्रकृति के गति आदि चौदह भेद हैं, जिनके उत्तर भेद पिचत्तर हैं। अब उनका वर्णन किया जा रहा है।

### 1. गतिनामकर्म

जिसके उदय से जीव को नरकादि गति मिलती है....उसके चार भेद हैं.....

अ. नरकगतिनामकर्म- जिसके उदय से जीव को नरक गति मिलती है....

ब. तिर्यचगतिनामकर्म- जिसके उदय से जीव को तिर्यचगति मिलती है....

स. मनुष्यगतिनामकर्म- जिसके उदय से जीव को मनुष्यगति मिलती है....

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 128

द. देवगतिनामकर्म- जिसके उदय से जीव का देवगति मिलती है.....

## 2. जातिनामकर्म

जिसके उदय से जीव का एकेन्द्रिय आदि शब्दों से व्यवहार किया जाता है। उसके पाँच भेद हैं.....चूँकि इन्द्रियाँ पाँच हैं।

अ. एकेन्द्रियजातिनामकर्म : जिसके उदय से जीव का एकेन्द्रिय आदि शब्दों से व्यवहार किया जाता है।

ब. द्वीन्द्रियनामकर्म : जिसके उदय से द्वीन्द्रिय नाम से जीव का व्यवहार होता है।

स. त्रीन्द्रियजातिकर्म : जिसके उदय से त्रीन्द्रिय नाम से जीव का व्यवहार होता है।

द. चतुरिन्द्रियजातिकर्म : जिसके उदय से चतुरिन्द्रिय नाम से जीव का व्यवहार होता है।

य. पंचेन्द्रियजातिकर्म : जिसके उदय से पंचेन्द्रिय नाम से जीव का व्यवहार होता है।

लोक में इन्हीं संस्कृत शब्दों के प्राकृतशब्द प्रचलित हैं....अर्थ में फर्क नहीं है। एगिंदिया-बेइंदिया-तेइन्दिया-चउरिन्दिया-पंचिन्दिया।

## 3. शरीरनामकर्म

जिस कर्म के उदय से जीव औदारिकवर्गणा आदि के पुद्गलों को ग्रहण कर औदारिक आदि शरीर रूप बनाता है। उसके पाँच भेद हैं....

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /129

अ. औदारिक शरीरनामकर्म- जिसके उदय से जीव औदारिकवर्गणा के पुद्गलों को ग्रहण कर औदारिक शरीर बनाता है।

ब. वैक्रियशरीरनामकर्म- जिसके उदय से जीव वैक्रियवर्गणा के पुद्गलों को ग्रहण कर वैक्रियशरीर बनाता है।

स. आहारकशरीरनामकर्म- जिसके उदय से जीव आहारकवर्गणा के पुद्गलों को ग्रहण कर आहारकशरीर बनाता है।

द. तैजसशरीरनामकर्म- जिसके उदय से जीव तैजसवर्गणा के पुद्गलों को ग्रहण कर तैजसशरीर बनाता है।

य. कार्मणशरीरनामकर्म- जिसके उदय से जीव कार्मणवर्गणा के पुद्गलों को ग्रहण कर कार्मणशरीर बनाता है।

#### 4. अंगोपांग नामकर्म

जिस कर्म के उदय से जीव को मस्तक, छाती, पेट, पीठ, हाथ, पाँव....ये सभी अंग, अंगुली आदि उपांग एवं रेखाएँ आदि अंगोपांग मिलते हैं, उस कर्म को अंगोपांगनामकर्म कहते हैं।

अ. औदारिक अंगोपांग नामकर्म

ब. वैक्रिय अंगोपांग नामकर्म

स. आहारक अंगोपांग नामकर्म

तैजस और कार्मण शरीर के अंगोपांग नहीं होते हैं....एकेन्द्रिय जीव को भी अंगोपांग नहीं होते हैं। पत्ते, डाल, टहनियाँ आदि भिन्न-भिन्न आकार के शरीर ही है.....न किसी के अंग, न किसी के उपांग।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /130

### 3. बंधननामकर्म

जिस कर्म के उदय से ग्रहण किये जा रहे औदारिक आदि पुद्गल पुराने औदारिक आदि पुद्गलों से जुड़ते हैं....उस कर्म को बंधननामकर्म कहते हैं। गौंद और लाख-लक्षारस की उपमा इसे दी गई है। इसके पंद्रह भेद हैं....

1. औदारिक-औदारिक बंधन नामकर्म
2. औदारिक-तैजस बंधन नामकर्म
3. औदारिक-कार्मण बंधन नामकर्म
4. वैक्रिय-वैक्रिय बंधन नामकर्म
5. वैक्रिय -तैजस बंधन नामकर्म
6. वैक्रिय -कार्मण बंधन नामकर्म
7. आहारक -आहारक बंधन नामकर्म
8. आहारक-तैजस बंधन नामकर्म
9. आहारक - कार्मण बंधन नामकर्म
10. औदारिक - तैजस कार्मण बंधन नामकर्म
11. वैक्रिय -तैजस कार्मण बंधन नामकर्म
12. आहारक - तैजस कार्मण बंधन नामकर्म
13. तैजस-तैजस बंधन नामकर्म
14. तैजस -कार्मण बंधन नामकर्म
15. कार्मण-कार्मण बंधन नामकर्म

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /131

## 4. संघातननामकर्म

जिस कर्म के उदय से जीव, शरीर की रचना करने वाले ऐसे निश्चित प्रमाणवाले पुद्गलों को दंताली की तरह इकट्ठा करता है।

उसके पाँच भेद हैं-

1. औदारिक-संघातननामकर्म
2. वैक्रिय-संघातननामकर्म
3. आहारक-संघातननामकर्म
4. तैजस-संघातननामकर्म
5. कार्मण-संघातननामकर्म

## 5. संघयण नामकर्म

जिस कर्म के उदय से जीव को हड्डियों की विशिष्ट रचना प्राप्त होती है। उसके छः भेद हैं, अर्थात् वज्रऋषभनाराच आदि संघयण जिस कर्म के उदय से प्राप्त होते हैं, उसे संघयण नामकर्म कहते हैं।

उन वज्रऋषभनाराच आदि छः संघयणों का वर्णन निम्न है...

1. वज्रऋषभनाराचसंघयण- जिसमें मर्कटबंध की तरह दो हड्डियाँ परस्पर जुड़ी हुई हो....ऊपर एक Solid हड्डी की पट्टी मजबूती से बंधी हुई हो और उसके भी ऊपर एक कील लगी हुई हो....हड्डी की ऐसी विशिष्ट रचना को वज्रऋषभनाराच कहते हैं।

रे कर्म तेरी गति न्यासी...!! / 132

चरमशरीरी - उसी भव में मोक्ष जाने वाले जीवों को यह संघयण अवश्यमेव होता है।

2. ऋषभनाराच संघयण- बाकी तो सब कुछ ऊपर मुजब ही होता है, सिर्फ ऊपर वाली कील नहीं होती है।

3. नाराच संघयण- जिसमें सिर्फ मर्कट बंध ही होता है।

4. अर्धनाराचसंघयण- जिसमें एक ओर तो मर्कट बंध होता है, मगर दूसरी ओर दो हड्डियाँ सिर्फ कील से जुड़ी हुई होती है।

5. कीलिका संघयण- जिसमें आमने-सामने की दोनों हड्डियाँ सिर्फ कील से ही जुड़ी हुई होती है।

6. छेवट्टं संघयण- जिसमें आमने-सामने की दोनों हड्डियाँ एक-दूसरे से सिर्फ छू कर ही रही हो....

अर्थात् एक हड्डी में दूसरी हड्डी सिर्फ फँस कर रही हो....

इस भरत क्षेत्र में रहने वाले आज के सभी लोगों को यही संघयण है....इसीलिये थोड़ा-सा झटका लगा नहीं कि फ्रेक्चर हो जाता है....हड्डी उतर जाती है....लोगों को बार-बार ओर्थोपीडिक सर्जन के यहाँ कतार में खड़ा रहना पड़ता है.....हाडवैद्यों के वहाँ धक्का-मुक्की सहनी पड़ती है।

संघयण छः है अतः उसके कारणभूत संघयणनामकर्म भी छः है।

1. वज्रऋषभनाराचसंघयण नामकर्म

2. ऋषभनाराचसंघयण नामकर्म

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /133

3. नाराचसंघयण नामकर्म

4. अर्धनाराच नामकर्म

5. कीलिकासंघयण नामकर्म

6. छेवडुंसंघयण नामकर्म

देव, नारक और एकेन्द्रिय को संघयण नामकर्म का उदय नहीं होता है। विकलेन्द्रिय (द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय) और असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों को छेवडुं संघयण नामकर्म का उदय होता है, अतः उन्हें छडा संघयण है.....ऐसा कहा जाता है।

संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों को अपने-अपने कर्मों के अनुसार छः संघयण होते हैं। पहला संघयण पुण्यप्रकृति है, दूसरे सभी पापप्रकृति है।

## 6. संस्थान नामकर्म

जिस कर्म के उदय से जीव को शुभ अथवा अशुभ स्वरूप की आकृति मिलती है। उसके छः भेद हैं।

### 1. समचतुरस्रसंस्थान नामकर्म

जिस कर्म के उदय से जीव को जिसमें चारों कोने समान हो, वैसा संस्थान मिले....अर्थात् पर्यकासन से बैठने पर...

अ. दाहिने कंधे से बाएँ घुटने तक का अंतर

ब. बाएँ कंधे से दाएँ घुटने तक का अंतर

स. दोनों घुटनों के बीच का अंतर

द. ललाट से दो घुटनों के मध्यभाग तक का अंतर

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /134

ये चारों अंतर समान नाप वाले हो....एवं जिसमें सभी अवयव शास्त्र में बताये गये शुभ लक्षणों से युक्त हो...उसे समचतुरस्र संस्थान कहते हैं और यह संस्थान जिस कर्म के उदय से मिले उसे समचतुरस्र संस्थान नामकर्म कहते हैं।

## 2. न्यग्रोध परिमंडल संस्थान नामकर्म

बरगद का पेड़ ऊपर की ओर सौन्दर्यसंपन्न होता है और नीचे की ओर कृश एवं सौंदर्यरहित होता है। इसी तरह जिस कर्म के उदय से नाभि के ऊपर का भाग शास्त्रोक्त शुभ लक्षणों से सहित होता है और नीचे का आकार शुभ लक्षणों से रहित होता है।

## 3. सादिसंस्थान नामकर्म

जिस कर्म के उदय से जीव को नाभि के ऊपर का भाग शास्त्रीय लक्षणों से रहित और नीचे का भाग शास्त्रीय लक्षणों से सहित मिलता है अर्थात् दूसरे नंबर के संस्थान से बिल्कुल उल्टा।

## 4. कुब्ज संस्थान नामकर्म

हाथ, पाँव, मस्तक और ग्रीवा का भाग शास्त्रीय लक्षणों से सहित हो और पेट तथा हृदय (छाती) लक्षण रहित हो....उसे कुब्ज संस्थान कहते हैं। यह संस्थान जिस कर्म के उदय से मिले उसे कुब्ज संस्थान नामकर्म कहते हैं।

## 5. वामनसंस्थान नामकर्म

जिस कर्म के उदय से जीव को कुब्ज से ठीक उल्टा संस्थान मिले....अर्थात् पेट और छाती तो लक्षण युक्त हो पर हाथ, पाँव, मस्तक और गर्दन शास्त्रीयलक्षण से रहित हो।

रे कर्म तेरी गति न्यारी....!! /135



## 6. हुंडकसंस्थान नामकर्म

जिस कर्म के उदय से जीव को शरीर के सभी अवयव अशुभ लक्षणवाले मिले।

**विशेष :** नारक, स्थावर और विकलेन्द्रिय को हुंडक संस्थान होता है। देव को पहिला संस्थान होता है, पंचेन्द्रिय तिर्यच और मनुष्य को छः संस्थान होते हैं।

पहला संस्थान नामकर्म पुण्यप्रकृति है। शेष पाँच पापप्रकृतियाँ हैं।

## 7. वर्ण नामकर्म

जिस कर्म के उदय से जीव के शरीर में श्वेतादि वर्ण (रंग) होते हैं। इसके पाँच भेद हैं-

1. कृष्णवर्ण नामकर्म- जिस के उदय से शरीर में काला-श्याम (Black) रंग होता है।

2. नीलवर्ण नामकर्म- जिसके उदय से शरीर में नील-आसमानी (Blue) रंग होता है।

2. लोहितवर्ण नामकर्म- जिसके उदय से शरीर में लाल (Red) रंग होता है।

3. हारिद्रवर्ण नामकर्म- जिसके उदय से शरीर में पीला (Yellow) रंग होता है।

4. श्वेतवर्ण नामकर्म- जिसके उदय से शरीर में श्वेत (White) रंग होता है।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 136

## 8. रस नामकर्म

जिस कर्म के उदय से जीव के शरीर में तिक्त (तीखा) आदि रस होते हैं.....उसके पाँच भेद होते हैं।

1. तिक्तरस नामकर्म- जिस कर्म के उदय से शरीर में मिर्च-सा तीखा रस होता है। मिर्च के जीवों को यह कर्म उदय में होता है।

2. कटुरस नामकर्म- जिस कर्म के उदय से शरीर में करेला जैसा कडुवा रस होता है.... करेला के जीवों को इसी कर्म का उदय होता है।

3. कषायरस नामकर्म- जिसके उदय से शरीर में हरडे-सा कसैला रस होता है।

4. आम्लरस नामकर्म- जिसके उदय से शरीर में इमली-सा खट्टा रस होता है।

5. मधुररस नामकर्म- जिसके उदय से शरीर में गुड़-सा रस होता है।

## 9. गंध नामकर्म

जिस कर्म के उदय से जीव के शरीर में सुगंध अथवा दुर्गंध होती है। उसके दो भेद हैं।

1. सुगंध नामकर्म- जिस कर्म के उदय से जीव के शरीर में गुलाब के फूल जैसी सुगंध होती है।

2. दुर्गंध नामकर्म- जिस कर्म के उदय से लहसून-सी दुर्गंध होती है।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /137

## 10. स्पर्श नामकर्म

जिस कर्म के उदय से जीव के शरीर में शीत आदि स्पर्श होते हैं। उसके आठ भेद हैं।

1. शीतस्पर्श नामकर्म- जिस कर्म के उदय से हिम जैसा ठंडा स्पर्श हो।

2. उष्णस्पर्श नामकर्म- जिस कर्म के उदय से जीव के शरीर में आग जैसा गर्म स्पर्श हो।

3. स्निग्धस्पर्श नामकर्म- जिस कर्म के उदय से जीव के शरीर में तेल जैसी चिकनाहट हो।

4. रुक्षस्पर्श नामकर्म- जिस कर्म के उदय से जीव के शरीर में राख-सा स्पर्श हो।

5. लघुस्पर्श नामकर्म- जिस कर्म के उदय से जीव के शरीर में रुई जैसा हल्का स्पर्श हो।

6. गुरु स्पर्श नामकर्म- जिसके उदय से शरीर में लोहे जैसा भारी स्पर्श हो।

7. मृदुस्पर्श नामकर्म- जिस उदय से शरीर में मक्खन-सा कोमल स्पर्श हो।

8. कर्कशस्पर्श नामकर्म- जिसके उदय से शरीर में करवत-सा स्पर्श हो।

विशेष : इन सभी उपरोक्त भेदों में काला और आसमानी रंग, दुर्गन्ध, तीखा और कडुआ रस, गुरु-कर्कश-रुक्ष और शीत स्पर्श ये नौ अशुभ हैं, शेष ग्यारह शुभ हैं।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 138

## 11. आनुपूर्वी नामकर्म

जिस कर्म के उदय से जीव को मृत्यु पाने के बाद अन्य गति-स्थान पर जाने में आकाशप्रदेशानुसार वक्र गमन होता है। इस कर्म को विभिन्न उपमाएँ दी जा सकती है। बैल की रस्सी खींचने पर बैल अपनी राह बदल लेता है। आज के जमाने में टु-व्हीलरों और थ्री व्हीलरों में हेन्डल का भी यही काम है। इसके चार भेद हैं।

1. नरकानुपूर्वी नामकर्म- जिसके उदय से नरक में जाते वक्त आकाशप्रदेशानुसार वक्रगमन हो।

2. तिर्यचानुपूर्वी नामकर्म- जिसके उदय से तिर्यचयोनि में जाते वक्त आकाशप्रदेशानुसार वक्रगमन हो।

3. मनुष्यानुपूर्वी नामकर्म- जिसके उदय से मनुष्ययोनि में जाते वक्त आकाशप्रदेशानुसार वक्रगमन हो।

4. देवानुपूर्वी नामकर्म- जिसके उदय से देवयोनि में जाते वक्त आकाशप्रदेशानुसार वक्रगमन हो।

## 12. विहायोगति नामकर्म

जिस कर्म के उदय से जीव को शुभ या अशुभ गति (चाल) मिलें, उसके दो भेद हैं।

1. शुभविहायोगति नामकर्म- जिसके उदय से हाथी-हंस आदि जैसी सुंदर चाल मिलें।

2. अशुभविहायोगतिनामकर्म- जिसके उदय से ऊँट आदि जैसी खराब चाल मिलें।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /139

चौदह पिण्डप्रकृतियों का संक्षेप में विहंगावलोकन करवा चुके हैं.....अब आठ प्रत्येक प्रकृतियों की बात समझायेंगे।

## 2. प्रत्येक प्रकृति

**प्रत्येक प्रकृति-** जिन प्रकृतियों के उपभेद नहीं होते हैं....उन्हें प्रत्येक प्रकृति कहते हैं। प्रत्येक प्रकृति के आठ भेद हैं।

1. **अगुरुलघु नामकर्म-** जिसके उदय से शरीर न भारी न हल्कापण महसूस होता है।

2. **उपघात नामकर्म-** जिसके उदय से शरीर में अवयव ऐसे मिले जिनसे स्वयं को बाधा हो, जैसे कि हथेली में छड़ी अंगुली आदि।

3. **पराघात नामकर्म-** जिसके उदय से औंरो को प्रभावित कर सके, वैसी आकृति मिले।

4. **श्वासोच्छ्वास नामकर्म-** जिसके उदय से श्वासोच्छ्वास वर्णना को लेकर उसे उच्छ्वास-निःश्वास के रूप जीव परिवर्तित करता है।

5. **आतप नामकर्म-** जिस कर्म के उदय से स्वयं ठंडा रहकर दूसरों को उष्णतायुक्त प्रकाश देने वाला शरीर मिलें....जैसे सूर्यविमान के रत्न के जीवों का शरीर स्वयं ठंडा रहकर भी दूसरों को गर्म प्रकाश आतप नामकर्म के उदय से देता है। अग्निकाय जीवों का शरीर उष्ण स्पर्श और रक्तवर्ण होने से गर्म प्रकाशवाला परंतु उन जीवों को आतप नामकर्म का उदय नहीं होता है.....क्योंकि अग्निकायजीवों का शरीर स्वयं ठंडा नहीं होता है।

6. **उद्योत नामकर्म-** जिस कर्म के उदय से जीव को

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /140

प्रकाशमान ठंडा स्पर्श देने वाला शरीर मिलें.....जैसे कि- चंद्र के विमान में रहने वाला रत्नों का शरीर और जुगनू का शरीर....

**7. निर्माण नामकर्म-** जो कर्म उदय में आने पर शरीर के अंगोंपागों को सुथार की तरह उन-उन योग्य स्थानों पर बनाये....जैसे मुखमंडल के बीच नासिका...(सूँघने के लिये नाक यदि पीछे की ओर होती तो सारा मजा किरकिरा जाता । )

**8. तीर्थकर नामकर्म-** जिस कर्म के उदय से जीव आठ महाप्रातिहार्ययुक्त तीर्थकर बनें और धर्मशासन तीर्थ की स्थापना करें ।

### 3. त्रस दशक

निम्नलिखित त्रस आदि दस प्रकृतियों के समूह को त्रस दशक कहते हैं ।

**1. त्रस नामकर्म-** जिस कर्म के उदय से त्रसपना प्राप्त हो । अर्थात् ऐसी काया मिले कि जिससे धूप से बचने के लिये स्वयं छांव में जा सके...जैसे कि चींटी, मनुष्य आदि ।

**2. बादर नामकर्म-** जिस कर्म के उदय से जीव को आँखों से देखा जा सके, वैसा शरीर मिले ।

**3. पर्याप्ति नामकर्म-** जिस कर्म के उदय से जीव अपने योग्य आहार पर्याप्ति आदि को पूर्ण करता है ।

**4. प्रत्येक नामकर्म-** जिस कर्म के उदय से हर एक जीव को अलग-अलग शरीर मिलें ।

**5. स्थिर नामकर्म-** जिस कर्म के उदय से जीव को स्थिर अंगोपांग मिलते हैं...जैसे कि दांत आदि ।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /141

6. शुभ नामकर्म- जिस कर्म के उदय से जीव को नाभि के ऊपर के शुभ अवयव मिलते हैं....जैसे कि सिर आदि ।

7. सौभाग्य नामकर्म- जिस कर्म के उदय से जीव को औरों पर उपकार न करे तो भी स्वतः बहुमान-मान-सम्मान प्राप्त होता है।

8. सुस्वर नामकर्म- जिस कर्म के उदय से जीव को कोयल-सी मधुर आवाज मिलती है ।

9. आदेय नामकर्म- जिस कर्म के उदय से तर्क रहित वचन बोलने पर भी तुरन्त स्वीकार कर लें ।

10. यश नामकर्म- जिस कर्म के उदय से यश मिलता है ।

#### 4. स्थावर दशक

निम्नलिखित स्थावर आदि दस प्रकृतियों के समूह को स्थावरदशक कहते हैं।

1. स्थावर नामकर्म- जिस कर्म के उदय से जीव को स्थावरपना प्राप्त हो....अर्थात् जिस कर्म के उदय से आने पर चाहे जितनी भी धूप पड़े या कष्ट आये जीव उस स्थान को छोड़कर नहीं जा सकता है। ऐसा शरीर मिले जैसे पेड़-पौधे....आदि ।

2. सूक्ष्म नामकर्म- जिस कर्म के उदय से अनेक शरीर इकट्ठे होने पर भी आँखों से न दिखें ।

3. अपर्याप्त नामकर्म- जिस कर्म के उदय से जीव अपने योग्य आहारादि पर्याप्तियाँ पूर्ण न करें ।

4. साधारण नामकर्म- जिस कर्म के उदय से अनन्ता जीवों के साथ एक शरीर में रहना पड़े ।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /142

5. **अस्थिर नामकर्म**- जिस कर्म के उदय से जीव को जीभ आदि अस्थिर अवयव मिलें ।

6. **अशुभ नामकर्म**- जिस कर्म के उदय से जीव को अशुभ अवयव मिले ।

7. **दौर्भाग्य नामकर्म**- जिस कर्म के उदय से लोगों पर उपकार किया हो तो भी लोगों के द्वारा अभिनन्दन न मिलें...लोग स्वागत आदि न करें । बल्कि लोग उससे कतराते फिरें....नाक-भौंसिकुड़ कर चले.....

8. **दुःस्वर नामकर्म**- जिस कर्म के उदय से जीव को कौए-सा कर्कश कर्णकटु स्वर मिलें.....भैंसासुर या गधासुर में वह गाने लगे तो लोग मैदान छोड़कर भागने लग जाय । इतना अप्रिय लगे ।

9. **अनादेय नामकर्म**- जिस कर्म के उदय से युक्तियुक्त वचन बोलने पर भी लोग उसका स्वीकार न करें ।

10. **अपयशनामकर्म**- जिस कर्म के उदय से जीव को अच्छे काम करने पर भी अपयश मिलें ।

## शुभप्रकृतियों के बंधहेतु

सरलता, रसगारव-ऋद्धिगारव और शातागारव का अभाव, लघुता, धर्मीपुरुषों को देख कर आनंदित होना, उनका स्वागत करना, परोपकार रसिकता, क्षमादि से शुभ नामकर्म बंधता है । शुभनामकर्म के उदय से जीव को अपनी शरीर की आकृति, रंग आदि सुंदर मिलते हैं ।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /143



## नाम बन्ध के हेत



## अशुभनामकर्म के बंधहेतु

शुभनामकर्म के बंधहेतु से विपरीत अशुभनामकर्म के बंधहेतु हैं।

## शुभनामकर्म के बंधहेतु और नंदिषेणमुनि

मगधप्रदेश के नंदिग्राम में एक गरीब ब्राह्मण की पत्नी सोमिला ने एक पुत्र को जन्म दिया। उसका नाम नंदिषेण रखा गया। पूर्वभव में वास्तविक सत्पुरुषों का असत्कार करना और स्वकल्पित धर्मियों का सत्कार करना आदि कारणों से अशुभ नामकर्म बाँधा हुआ था। अतः वह लड़का जन्म से ही विचित्र और अप्रिय आकृतिवाला था।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /144

नाक टेढ़ा था....कान टूटे हुए...आँखें टेढ़ी....बाल पीले.....पेट बड़ा....शरीर ठिगना....। कुल मिलाकर देखा जाय तो कुछ भी सही नहीं था....अतः वह बड़ा कदरूप लगता था। बचपन में ही बेसहारा-अनाथ हो गया। माँ-बाप की मृत्यु हो गई। अतः वह ननिहाल में ही बड़ा हुआ। मामाजी के काम-काज में भी हमेशा हाथ बँटाता रहता था।

नंदिषेण सीधा-सादा आदमी था। लोगों ने उसे बहकाया, तो वह उनकी बातों में आ गया। वह सोचने लगा कि मामा के घर रहना उचित नहीं है....। यहाँ मेरी कभी तरक्की नहीं हो सकेगी। मेरी जवानी ऐसे ही निकल जायेगी तथा शादी भी नहीं हो पायेगी। अतः परदेश में चले जाना चाहिये।

नंदिषेण ने अपना निर्णय मामाजी को कह सुनाया। मामाजी ने खूब समझाया और अंत में यह भी कह दिया 'रही तेरी शादी की बात, तो उसकी चिन्ता छोड़ दे....मेरी सात लड़कियाँ हैं, उनमें से किसी एक के साथ तेरी शादी कर दूँगा। (अलग-अलग देश के भिन्न-भिन्न रीतिरिवाज होते हैं।) मामाजी ने सातों लड़कियों को बुलवाया और पूछा तो सभी ने एक स्वर में स्पष्ट तौर पर कह दिया कि हमें आत्महत्या करना मंजूर है, परन्तु नंदिषेण जैसे बदरूप के साथ शादी करना कतई मंजूर नहीं....!'

तब सुझ नंदिषेण ने विचार किया 'इसमें इनका कोई दोष नहीं है....दोष मेरे अपने कर्मों का है। अतः मुझे यहाँ से कहीं दूसरी जगह अवश्य जाना चाहिये।' अतः एक दिन नंदिषेण बिना किसी को बताये वहाँ से निकल पड़ा।

धूमता-धूमता वह रत्नपुर पहुँचा। बगीचे में लोगों को आनंद-

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /145

प्रमोद करते हुए देखकर उसके मनमें अपार ग्लानि हुई... 'ओह ! ये सभी लोग कितने सुखी है ?' और मैं कितना दुःखी हूँ ! रोज-रोज यूँ दुःखी होने के बजाय 'और उसने मन ही मन फैसला कर दिया 'आत्महत्या....खुदकुशी !!'

और वह चल पड़ा भयानक अटवी के पथ पर.... भाग्यवशात् अचानक एक जैन मुनिश्री मिल गये....नंदिषेण के दिल की दर्दली कहानी सुनकर मुनिश्री ने वैराग्यमय उपदेश दिया। साधना का महत्व समझाया।

सुझ नंदिषेण तुरन्त समझ गया और विरक्त होकर जीवन की श्रेष्ठ साधना चारित्रपंथ पर आरूढ़ हो गया। दीक्षा लेने मात्र से अपनी साधना की इतिश्री न मानकर, नंदिषेणमुनि ने घोर अभिग्रह लिया... 'आज से मुझे बेले (छट्ट) के पारणे आंयबिल करने और कोई ग्लान बीमार साधु आ जाय तो उनकी पूर्ण सेवा करने के बाद ही पारणा करना.....!

नंदिषेणमुनि का वैयावच-सेवापूर्ण जीवन चलता रहा..... उन्हें प्रसिद्धि का मोह नहीं था, मगर संकल्प से साधना और साधना से सिद्धि और सिद्धि से प्रसिद्धि तो अपने आप ही मिलती है। उसके लिये किसी से याचना नहीं करनी पड़ती...। नंदिषेण महामुनि के वैयावच गुण की सुगंध तिर्यक्लोक में तो क्या....देवलोक में भी फैल गई।

इन्द्रलोक में स्वयं इन्द्र ने नंदिषेण महामुनि की जी भर करके प्रशंसा की। वहाँ उपस्थित दो देवों को यह बात हजम नहीं हुई। परीक्षा लेने के उद्देश्य से पृथ्वी पर आये और एक रोगग्रस्त वृद्ध साधु का वेश बनाकर रत्नपुरनगरी के बाहर बैठ गया तथा दूसरे

३ कर्म तेरी गति न्यारी...!! /146

साधु का वेश बनाया और सीधा पहुँच गया महामुनिवर के पास । उस वक्त वे पारणे की तैयारी कर रहे थे....यह देख वह मुनि क्रोध से चिल्लाने लगा कि 'बाहर तो रोगग्रस्त साधु दुःखी बैठे हैं और तुम्हें खाने की सूझ रही है ? केवल दिखावे के लिए वैयावच का ठेका ले रखा है ? वैयावच का स्वांग रचते हो ?' इस तरह साधु रूपधारी देव ने कठोर वचनों के द्वारा नंदिषेण मुनि की तर्जना-भर्त्सना करते हुए भयंकर तिरस्कार किया ।

नंदिषेण मुनि ने पारणा करने का विचार छोड़ दिया । सेवा के लिये तुरन्त खड़े हो गये और शांत भाव से उत्तर दिया 'महात्मन् ! मुझे पता नहीं था....इसलिये मैं वापरने (भोजन) के लिये बैठ रहा था ...' ऐसा कहकर नंदिषेण मुनि सेवा के लिये पानी लेने को निकल पड़े ।

देवमाया थी.....अतः जहाँ मुनि वोहरने जाते, देव अपनी माया से कुछ न कुछ दोष लगा देता, कच्चे पानी के छींटे उड़ेल देता तो कभी हरी-वनस्पति रास्ते में डाल देता.....! नंदिषेण मुनि घूम-घूमकर थककर चूर हो गये । तब कहीं जाकर शुद्ध पानी मिला । पानी लेकर मुनि बने हुए देव के साथ नंदिषेण महामुनि वहाँ से नगर के बाहर गये ।

वहाँ एक वृद्ध साधु विष्टा से लिप्त सो रहे थे । उनके शरीर से भयंकर बदबू आ रही थी । पूरे शरीर पर मक्खियाँ भिनभिना रही थी.....।

नंदिषेण महामुनि ने अत्यन्त समतापूर्वक वृद्धमुनि को अचित पानी से साफ किया । बुद्धे महाराज ने चलने का स्पष्ट इंकार कर दिया कि मेरे पाँव चलने में अशक्त है...!

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /147

नंदिषेण मुनि ने सहर्ष उन्हें अपने कंधों पर उठा लिया। पर देवमाया से उसने मुनिवर की पीठ पर संडास कर दिया। असह्य दुर्गन्ध चारों ओर फैल गई। ऊपर से वृद्ध साधु धमकाने लगा कि जल्दी-जल्दी चलो....क्या चींटी की तरह चल रहे हो.....तुमने तो वैयावच्च का ठेका ले रखा है न....? जब महामुनि बिना कोई टिप्पणी किये शीघ्रता से चलने लगे तो फिर वृद्ध साधु ने उन्हें फिर प्रताड़ित किया 'अरे ! वैयावच्च के बहाने तुमने मुझे दुःखी-दुःखी कर दिया...ठीक से चलना भी नहीं आता....? साधु बने हो....? दौड़ने के सिवाय और कुछ आता भी है क्या.....?'

इतना सब कुछ होते हुए भी नंदिषेण महामुनि वैयावच्च और सेवा की भावना से तनिक भी चलित नहीं हुए। सोचने लगे- अरे ! मेरे कारण वृद्ध मुनिराज को कितनी भयंकर वेदना हो रही है....' इस तरह चिन्तनधारा में क्षमाभाव से उनकी सेवा में अपार आनंद का अनुभव करने लगे।

आखिर देव प्रकट हुए.....उनके वैयावच्च गुण की मुक्तकंठ से प्रशंसा की और क्षमा माँगकर स्वस्थान पर चले गये।

नंदिषेण महामुनि ने स्पृहारहित सरलभाव से धर्मपुरुष मुनिजनों की अपार-सेवा की.....उनका सत्कार-बहुमान किया। अतः शुभभावों के परिणामस्वरूप उन्होंने शुभनामकर्म का उपार्जन किया। जिससे अगले भव में अत्यन्त सुंदर रूपगुण संपन्न शरीरवाले वसुदेव बने। ये ही वसुदेव श्रीकृष्णवासुदेव के पिताश्री थे।

# गोत्रकर्म के भेद और बंधहेतु

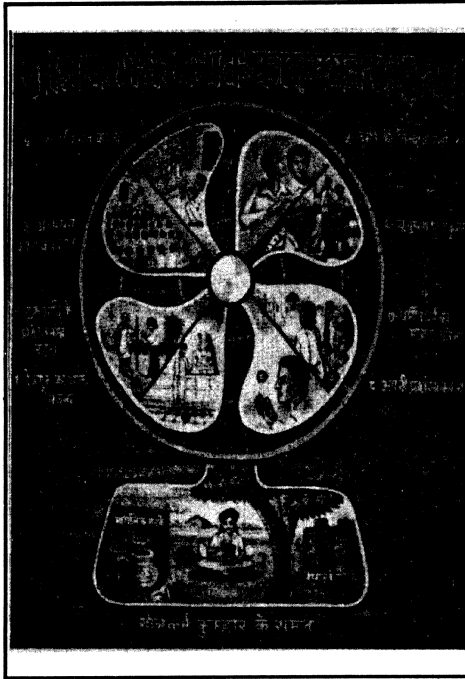
गोत्र कर्म के दो भेद होते हैं।

## 1. उच्च गोत्रकर्म

जिस कर्म के उदय से ऐश्वर्य और सत्कार आदि से संपन्न ऐसे उत्तम कुल और जाति में जन्म हो।

## 2. नीचगोत्र

जिस कर्म के उदय से ऐश्वर्य आदि से रहित ऐसे हीन कुल और जाति में जन्म हो।



रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /149

## गोत्रकर्म के बंधहेतु

गोत्रकर्म के दो भेद हैं, अतः प्रत्येक के बंधहेतु अलग-अलग बताये जा रहे हैं।

### उच्चगोत्र के बंध हेतु

1. देव-गुरु का भक्त बनना।
2. गुरु आदि के प्रति विनयशील रहना।
3. अध्ययन करना कराना।
4. प्रायश्चित लेना आदि।

### नीचगोत्र के बंधहेतु

नीचगोत्र के बंधहेतु वैसे यहाँ चार बताये जा रहे हैं-

#### 1. दूसरों की निंदा करना

निंदा का रस इतना मीठा होता है कि आम का मीठा रस भी उसके आगे पानी भरे...! निंदा करने वाला यह समझता है कि मैं सामने वाले को हल्का बताऊँगा तो लोगों को उस पर तिरस्कार होगा....बस इसी क्षणिक आनंद के लिये वह इतनी भयंकर सजा को-कर्मसत्ता के खौफ को अपने सिर लेता है...। याद रखिये 'वो ऐसा है....' यह कहते वक्त एक अंगुली सामने वाले की ओर होती है, तो चार आपकी ओर ही होती है.....निंदा करनी है तो अपनी निंदा करो....आत्मनिंदा ! औरों की निंदा से नीचगोत्र बँधता है....जिससे हीन कुल वालों के घरों में जन्म लेना पड़ेगा, जहाँ व्यक्ति को पल-पल तिरस्कार सहना पड़ता है।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /150

## 2. दुगंछा करनी

मुनि के मलमलीन वस्त्र और गात्र देखकर दुगंछा नहीं करनी चाहिये। मुनि के मैले-कुचैले कपड़े और तन-बदन को देखकर नाक-भों सिकुड़ने वाला नीचगोत्र बाँधता है।

‘मुनि मल वस्त्रनी घृणा करता, नीच गोत्र बाँधाय रे प्राणी....’ श्रावकवर्ग हर चतुर्दशी को अतिचार में बोलते भी हैं.... ‘साधु-साध्वी तणा मलमलीन गात्र देखी, दुगंछा कीधी।

इसमें दो बातें स्पष्ट उजागर होती हैं.....शक्य हो तब तक साधु-साध्वी को वर्ष में एक ही बार अर्थात् चौमासे के पूर्व कपड़े धोने चाहिये...(उउबद्धस्स.....ओघनिर्युक्ति 349 श्लोक) ऐसा करने पर स्वाभाविक है कि कपड़े मैले रहेंगे....और उस वक्त यदि कोई उनसे घृणा करता है या उनकी दुगंछा करता है तो उसे नीचगोत्र का बंध होता है।

## मेतारज मुनि

मेतारज मुनि के जीव ने पूर्वभव में चारित्र लिया था। परन्तु ब्राह्मण के कुल में जन्म लिया हुआ था..... ब्राह्मण के शौचवादी संस्कार रग-रग में बसे हुए थे...अतः चारित्र पालन करना अच्छा है, मगर मैले-कुचले रहना अच्छा नहीं...। अचित्त गर्म पानी से स्नान न भी करे तो भी कपड़ा भिगो कर शरीर का मैल साफ कर देते हैं तो कौन-सा बड़ा पाप लग जाता है ? मैले-मैले रहना अच्छा नहीं। यह मैल की दुगंछा हुई। प्रायश्चित्त नहीं लिया (प्रायश्चित्त ले लिया होता तो ऐसे मानसिक पापों का प्रायश्चित्त कोई मासक्षमण थोड़े ही आता हैं?) इससे नीचगोत्र बँध गया। अतः तीसरे भव में वे चंडाल के कुल में उत्पन्न हुए।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /151



इसी तरह चित्रक और संभूति (ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती का जीव) भी चंडाल के रूप में थे, चूँकि पूर्वभव उन्होंने भी साधु बनकर मलीन वस्त्र आदि की दुगंछा की थी।

### 3. धर्म करने वालों की मजाक उड़ानी

कोई भक्त धोती पहन कर परमात्मा की भक्ति करने जा रहा हो तो उसकी मजाक उड़ानी....उसकी खिल्ली उड़ानी। इस तरह से नीचगोत्र का बँध होता है।

### 4. स्वप्रशंसा

यह रोग टी. बी. की तरह घर-घर घुसपैठ कर चुका है। भले-भले नेता-अभिनेता, अमीर-गरीब, योगी-भोगी, आचार्य-साधु सब इसके शिकार हैं। इसके चंगुल में इस कदर फँस जाते हैं कि चाह कर भी निकल नहीं पाते। येन-केन-प्रकारेण स्वप्रशंसा करनी, यह आज के आदमी की एक आदत-सी बन गई है....मॉडर्न फैशन बन गई है।

मगर याद रखिये....स्वप्रशंसा, आप बड़ाई करने से नीचगोत्र का बँध होता है। चूँकि उस वक्त आत्मा अभिमान में इतनी चूर हो जाती है कि मानो उस पर कोई भूत सवार हो बैठा हो।

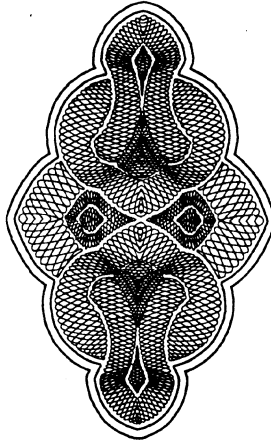
हम इतिहास की ओर गौर करेंगे तो एक नहीं, ऐसे अनेक उदाहरण पायेंगे....

भगवान महावीर का जीव मरीचि ने कुल का अभिमान किया कि ओह ! मेरा कुल कितना महान....मेरे दादा प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ....' मेरे पिताजी प्रथम चक्रवर्ती (भरतचक्री), और मैं इसी भरत का प्रथम वासुदेव ! इस तरह अहंकार में आकर नाचने

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /152

लगे, तब नीचगोत्र का बँध पड़ गया। जिसका बैंक बेलेन्स सत्ताइसवें भव तक चुकाना पड़ा।

हरिकेशी मुनि ने पूर्व भव में जाति का अभिमान किया था, इसलिये चंडाल कुल में जन्म लेना पड़ा।



रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /153

# अन्तराय कर्म के भेद और बंधहेतु

अन्तराय कर्म के मुख्य पाँच भेद हैं।

## 1. दानान्तराय कर्म

जो कर्म दान देने में विघ्न करें.....अर्थात् अपने पास दान देने योग्य चीज हो.....लेने वाला योग्य पात्र भी हो.....मगर जिस कर्मोदय से दान देने की इच्छा ही न जगे....उसे दानान्तराय कहते हैं।

## 2. लाभान्तराय कर्म

जिस कर्म के उदय से जीव को इष्टवस्तु की प्राप्ति न हो।

## 3. भोगान्तराय कर्म

जिस कर्म के उदय से जीव एकबार भोगने योग्य अन्नादि योग्य वस्तु का भोग न कर सके।

## 4. उपभोगान्तराय कर्म

जिस कर्म के उदय से जीव अनेक बार भोगने योग्य अन्नादि योग्य वस्तु का भोग न कर सके।

## 5. उपभोगान्तराय कर्म

जिस कर्म के उदय से जीव अनेक बार भोगने = उपयोग में लाने योग्य वस्त्र-दागिने-मकान आदि का उपभोग न कर सकें।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /154

## 6. वीर्यान्तराय कर्म

जिस कर्म के उदय से जीव को शक्ति प्राप्त न हो और दुर्बलता आदि प्राप्त हो।

### सत्ता में 158

इस तरह सत्ता की अपेक्षा से ज्ञानावरणादि कर्मों के कुल भेद  $5+9+2+28+4+103+2+5=158$  हुए।

### उदय के 122

सत्ता में वर्णादि के 20 उपभेद गिने जाते हैं। किन्तु उदय में वर्ण, रस, गंध, रस और स्पर्श ये चार भेद ही गिने जाते हैं। अतः  $20-4=16$  भेद उदय में कम हो जाते हैं।

तथा बंधनामकर्म के पन्द्रह भेद और संघातन नामकर्म के पाँच भेदों को शरीरनामकर्म में ही समावेश हो जाता है, अतः वे बीस भेद भी उदय की गिनती में नहीं आते हैं। अतः नामकर्म के  $16+20=36$  भेद उदय में अलग नहीं गिने जाते हैं, अर्थात् उदय की अपेक्षा से  $158-36=122$  कर्म के भेद होते हैं।

### बंध में कर्म के 120 भेद

उदय में दर्शन मोहनीय कर्म के तीन भेद सम्यक्त्वमोहनीय, मिश्रमोहनीय और मिथ्यात्वमोहनीय होते हैं। परन्तु बंध में मिथ्यात्वमोहनीय एक ही होता है....चूँकि सम्यक्त्वमोहनीय और मिश्रमोहनीय बंधते नहीं है....वे तो मिथ्यात्वमोहनीय कर्म के रस की मात्रा घटाने से ही उत्पन्न होते हैं।

सिर्फ मिथ्यात्वमोहनीय कर्म ही बंधता है। अतः उदय की अपेक्षा से बंध में दो भेद कम समझने चाहिये।  $122-2=120$  भेद

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /155

उदय में एक सौ बाईस तो बंध में एक सौ बीस ।

## अन्तराय कर्म के बंध हेतु

1. हिंसा करना ।
2. प्रभु पूजा में विघ्न डालना (पूजा में पाप है ऐसा उपदेश देकर भक्तों को प्रभुपूजा न करने देना...इससे भयंकर अन्तरायकर्म बंधता है ।)
3. मंदिर-उपाश्रय-पाठशाला आदि में जा रहे जीवों को रोकना ।



रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 156

#### 4. पशु आदि का मुँह बाँधना ।

भोजन करने में या वस्त्र पहनने में अंतराय करना....तथा धर्म क्रियाओं में आलस्य-प्रमाद करना....आदि अन्तराय कर्म के बंध हेतु हैं।

### अंजनासुंदरी दुःखी क्यों हुई ?

जैनदर्शन कार्य कारण सिद्धांत थियरी में मानता है। कार्य है तो कारण होगा ही....

बाईस साल तक अंजना को पतिवियोग का दुःख सहना पड़ा...तदुपरांत गर्भवती अंजना को सास ने एवं स्वयं के पिता ने घर से निकाल दिया....जंगल में अपार दुःख सहना पड़ा। गुफा में ध्यानस्थ ज्ञानी भगवंत को जब अंजना की सखी वसंततालिका ने इस दुःख का कारण पूछा। ज्ञानी भगवंत ने कहा है- 'कडाण कम्माण ण अत्थि मोक्खो...' कर्म किये हैं तो भुगतने ही पड़ेंगे।' ज्ञानी भुगते ज्ञान से मुख भुगते होय' हँसता ते बाँध्या कर्म रोता ते नवि छूटे रे' इसलिये तो कहा है 'बंध समय चित्त चेतीये रे उदये शो संताप सलूणा....' इस प्रकार सान्त्वना समाधि देकर अंजना सुंदरी का पूर्वभव कह सुनाया।

राजा की दो रानियाँ थी। एक का नाम लक्ष्मीवती और दूसरी का नाम कनकोदरी। लक्ष्मीवती अपार श्रद्धा और बहुमान के साथ परमात्मा की भक्ति - सेवा पूजा आदि करती थी.....अतः लोग उसकी प्रशंसा करते थे। कनकोदरी की कोई प्रशंसा नहीं करता था...चूँकि प्रशंसा के योग्य वह कुछ भी नहीं करती थी। बल्कि वह दिन रात लक्ष्मीवती की ईर्ष्या करती थी....मन ही मन जलभून कर राख हो जाती थी। ईर्ष्या बहुत बुरी बला है। ईर्ष्यान्ध बनी हुई

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /157

कनकोदरी एक भयंकर कुकृत्य कर बैठी। उसने सोचा 'न रहे बाँस, न बजे बाँसुरी....' भगवान की मूर्ति है इसीलिये वह पूजा करती है न ! तभी तो उसकी प्रशंसा होती है.... 'मूलं नास्ति कुतः शाखा' इस अशुभ विचारधारा में आकर उसने अरिहंत परमात्मा की मूर्ति उठाकर कूड़ा-करकट में छूपा दी....गंदगी में सुला दी।

(विस्तृत मर्मस्पर्शी कहानी के लिये लेखक की सचित्र 'एक थी राजकुमारी' पढ़िये)।

इस प्रकार कनकोदरी ने पूजा में विघ्न डाला और परमात्मा की भयंकर आशातना की। इस अपकृत्य से कनकोदरी ने उपभोगान्तराय आदि कर्म बाँधे।

(आप को आश्चर्य होगा....इस कर्मवाद से अनभिज्ञ लोग आज भी ऐसे हीनकृत्य कर बैठते हैं....मेवाड़ में एक गाँव के मूढ गँवार लोगों ने परमात्मा की मूर्ति को तालाब में डाल दी, ओह! इस अपकृत्य से बाँधे गये भयंकर कर्मों से न जाने वे किस भव में छूटेंगे?)

कनकोदरी का जीव ही अंजनाकुमारी बना। बाँधे हुए कर्म का उदय हुआ और उसे बाईस साल तक पतिवियोग हुआ....तदन्तर घर, कपड़े, आभूषण आदि में अन्तराय पड़ा और जंगल में दर-दर भटकना पड़ा....कितना भयंकर फल है अन्तराय कर्म का !

यह तो सामान्य-सी बात हुई....विशेष विचार भी किया जा सकता है अर्थात् अन्तराय कर्म के जो पाँच भेद हैं, उसके अलग-अलग बँध हेतु भी बताये जा सकते हैं।

## 1. दानान्तरायकर्म का बंधहेतु

दान की निंदा करनी, दान देते वक्त या देने के बाद पश्चाताप करना। मम्मण ने पूर्व भव में यह कर्म बाँधा था। अतः अथाह सम्पत्ति होते हुए भी वह दान-पुण्य न कर सका और मरकर सातवीं नरक में गया।

## 2. लाभान्तराय कर्म बंधहेतु

दूसरों को लाभ होता है, उस समय अंतराय करना....अनीति आदि करनी....इसमें लाभान्तराय कर्म बँधता है। अगले भव में व्यापारादि में लाभ नहीं होता है।

## 3. भोगान्तराय कर्मबंध कारण

भोग = जिसका एक ही बार भोग = उपयोग किया जा सके। दूसरी बार काम ही न लगे, भोजन आदि.....। रसगुल्ले - ए वन हैं.....फर्स्ट क्लास हैं.....हलवाई की घंटों की मेहनत है.....मगर मुँह में डाला नहीं कि शरीर की सारी फेक्ट्री चालू हो जाती है....! दुनिया के कारखानों में देखा जाता है कि थर्ड क्लास माल डालो तो फर्स्ट क्लास बनकर निकलता है। मगर यह अपना शरीर एक ऐसी अजीबोगरीब फेक्ट्री है कि ए वन माल को थर्ड क्लास बना देती है। उन्हीं रसगुल्लों का दूसरे दिन जो प्रोडक्ट तैयार होकर बाहर निकलता है (पाखाने में) उसे आदमी देखने की भी इच्छा नहीं करता है....

अतः भोजन को भोग माना गया है....दूसरी बार काम ही नहीं लगता.....पेन....पेन्सिल.....पेंट.....शर्ट.....का उपभोग होता है। चूँकि उनका उसी रूप में दूसरे दिन भी उपयोग हो सकता है।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /159



## ढंढणकुडर

डररररर ढंढणकुडर कर डरर डूर डर डें करसरनूं कर डरररररर थर । डर डरररनूं कर डुरडन आ डरतर और डुरडन कर डरडर डुर डरतर, तर डररररर करररनूं कर डर करतर कर 'एक-एक ककर डरर खेत डें लगर आओ ।' डरररर करररन डरतर कडर न करतर....सक डै सतर के सरडने शरन करड नररर आतर डै, सर अनरकक सर डुर डरडरडसुतर लरडे गडे करड डुर डुर आते । डर डुरकर अनररर कररने से लरडरनुतररर करड डररर और डुरडन डें अंतररर कररने से डुरगनुतररर करड डररर...अतः ढंढण ःडर कर छड डररने तक आडर नररर डरलर । डरर डरड डें तर डुरकरी डुर डरलर । शुर डेडरनरथ डुरगवरन ने कडर- 'डर तुडररर अडर लडुडर से नररर डरलर डै...तुडररर अडुरगड डुरर नररर डुरर डै, ढंढण ःडर डुरकरी डररने लगे....डररूं कर अडर वरशुडुडर के डल डर उनुडें कैवलड कर डुररर डुरर ।

### 4. उडडुरगनुतररर करड के डंधडेतु

एक डर उडडुरग डें लेने के डरड डुररर डर डररररर उडडुरग कररर डर सके, उसे उडडुरग कडते डैं । डैसे कर डरगरने.... कडडे....डर आडर । उडडुरग डें अनुतररर करे तर उडडुरगनुतररर करड डंधतर डै और डरर डर करड डर उडडुर डें आतर डै, तर डरडणरसुंडरर कर डररन सुरसुंडरर कर तरड उडडुरग कर सरडगुररूं कर डुरग नररर कर सकते डैं ।

डरतर ने डुरक- डुरणड से कडर डरलतर डै ?

डैनुडरड डरडडुर डुरर डरडणरसुंडरर डुरलर- डरतरडुर ! डुरणड से डरर कुरडें डरलतर डै....

1. वरनड 2. वरवेक 3. सुरडुरसनुडुरशरंत डन 4. शुरल सुरशुरडरड डेड और 5. डुरक डरग कर डुरग ।

रे करड तेरर गतर नुडरर...!! /160

मिथ्यात्व में उलझी हुई सुरसुंदरी बोली- 1. धन 2. यौवन  
3. चतुरता 4. स्वस्थकाया और 5. मनपसंद स्नेही।

मयणा का गणित पुण्य को बढ़ाने वाला था। वहीं सुरसुंदरी का गणित पुण्य को सफाचट करने वाला था। सुरसुंदरी ने पूर्वभव में उपभोगान्तराय बाँधा हुआ था। अतः राजकुमार के साथ शादी हो गई तो भी दुःखी होना पड़ा। सुरसुंदरी अपने पति के साथ गाँव बाहर रूकी हुई थी। चोरों का हमला हुआ। सुरसुंदरी को राजमहल आदि राजशाही भुगतने को नहीं मिला। चोर उसे उठाकर ले गये और बब्बर देश में उसे बेच दी। वहाँ वह नाट्यमंडली में काम करने लगी। इधर मयणा की शादी राजा ने कुष्ठरोगी श्रीपाल के साथ कर दी। श्रीनवपद की आराधना से कुष्ठरोग चला गया। राजऋद्धि-सिद्धि मिली।

सुरसुंदरी को उपभोगान्तराय कर्म का उदय था।

जबकि मयणासुंदरी को इस कर्म का उदय नहीं था।

## 5. वीर्यान्तराय कर्म के बंधहेतु

धर्मक्रिया में अपनी शक्ति को छुपाये....आलस्य करें....तब वीर्यान्तराय कर्म बँधता है।

इस तरह कर्म के भेदों का वर्णन और कर्मबंध के विशेषहेतुओं का संक्षिप्त वर्णन पूरा हुआ।

विशेष जिज्ञासुओं से अनुरोध है कि वे गुरुगम से छः कर्मग्रंथ, कम्मपयडि, पंचसंग्रह, खवगसेढी, उपशमनाकरण, कर्म सिद्धि मार्गणा द्वार विवरण, सत्ताविहाणं आदि ग्रंथों का सांगोपांग अध्ययन करें।



रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /161

## परिशिष्ट

इस पुस्तक को उपन्यास की तरह एक बार पढ़कर अलमारी को मत सौंपना.....पुस्तक की दुर्दशा के साथ जीवन की उन्नति की भी दुर्दशा हो जायेगी....चूँकि इस पुस्तक को बार-बार पढ़ने से और पढ़कर चिन्तन-मनन पूर्वक हृदय में उतारने से जीवन उज्वल उन्नति के पथ पर अग्रसर होता है।

पुस्तक को दो-तीन बार पढ़ने के बाद निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर ढूँढ लीजिये। सही उत्तर नीचे दिये गये हैं। उसके साथ निरीक्षण करके आपके द्वारा दिये गये उत्तरों को विद्वित करते जाइये....आपकी स्मरण-शक्ति को एक चेलेंज है, चुनौति है। इस परीक्षा से आप अपनी बुद्धि को कसौटी पर परखिये....! सत्तर प्रतिशत विशिष्ट प्रथम श्रेणी, साठ प्रतिशत प्रथम श्रेणी, पैंतालीस प्रतिशत द्वितीय श्रेणी, पैंतीस प्रतिशत तृतीय श्रेणी और फिर यदि उससे भी कम मार्क्स आये....तो फिर ? हर एक प्रश्न का एक मार्क है।

### आध्यात्मिक ज्ञानशिविर, कर्मवाद के विषय में पूछे गये प्रश्न-

सूचना- नीचे वाक्य दिये गये हैं.....हर एक प्रश्न में एक या दो रिक्त स्थान हैं। हर एक के आगे कुछ शब्द दिये गये हैं.....उनमें से योग्य शब्दों को चुनकर रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये.....उत्तर का शब्द पूरा लिखने की बजाय 'अ' 'ब' या 'स' आदि उत्तर पत्र में लिखिये...

#### 1. कर्म की मुख्य.....प्रकृतियाँ हैं।

(अ) पाँच (ब) छह (स) आठ

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 162

2. नाम कर्म के मुख्य.....भेद हैं, और बंधन नामकर्म के..... भेद हैं।

(अ) 4-15 (ब) 5-10 (स) 1-2

3. सुख.....से मिलता है, जबकि दुःख.....से मिलता है। यह सनातन सत्य है।

(अ) आश्रव-निरोध (ब) पुण्य-पाप (स) कर्म-काल

सूचना- नीचे पारिभाषिक शब्द दिये गये हैं। हरेक के लिये तीन अर्थ दिये गये हैं....सही उत्तर खोज कर उसका नम्बर अपने उत्तर पत्र पर लिख लीजिये....

4. पुद्गलास्तिकाय किसे कहते हैं ?

(अ) आँख के द्वारा जिसे हम दुनिया में देख सकते हैं।

(ब) तीर्थकरों को ही जिसका अनुभव हो सकता है।

(स) सभी एक ही साथ जिसका ध्यान करते हैं।

5. जैन परमाणु किसे कहते हैं ?

(अ) अपनी पैनी दृष्टि से अविभाज्य अंश।

(ब) केवली की दृष्टि से अविभाज्य अंश

(स) प्रोटोन, इलेक्ट्रोन और न्यूट्रॉनों का समूह

6. प्रचला किसे कहते हैं ?

(अ) खड़े-खड़े नींद आए।

(ब) नींद ही न आए।

(स) थोड़ी नींद आए।

रे कर्म तेरी गति न्यासी...!! /163

7. शातावेदनीय कर्म किसे कहते हैं ?
- (अ) जिसके उदय से सुख का अनुभव हो।  
 (ब) जिसके उदय से दुःख का अनुभव हो।  
 (स) जिसके उदय से सुख और दुःख का अनुभव हो।
8. अनंतानुबंधी कषाय किसे कहते हैं ?
- (अ) जीवन के अंत तक रहता है  
 (ब) छह महीने तक रहता है  
 (स) पन्द्रह दिन तक रहता है
9. अकामनिर्जरा किसे कहते हैं ?
- (अ) बिना इच्छा से कष्ट सहन करना।  
 (ब) इच्छा पूर्वक कष्ट सहन करना।  
 (स) दूसरों के कहने से कष्ट सहन करना।
10. संयम किसे कहते हैं ?
- (अ) इन्द्रियों के ऊपर अंकुश रखना।  
 (ब) पूजा करनी आदि।  
 (स) परमात्म-दर्शन करना।

सूचना- सही उत्तर ढूँढ कर अपने उत्तर पत्र में अ, ब, स, लिखिये।

11. छेवट्टं संघयण किसको कहते हैं?
- (अ) जिसमें मर्कट बँध हो।  
 (ब) हड्डियाँ एक-दूसरे से छू कर रहे।  
 (स) जिसमें कील लगी हुई हो।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 164

12. समचतुरस्र संस्थान किसको कहते हैं?  
 (अ) ऊपर के अवयव जिसमें शुभ हो।  
 (ब) नीचे के अवयव शुभ।  
 (स) चारों कोण जिसमें समान हो।
13. हुंडक संस्थान किसको कहते हैं?  
 (अ) सभी अवयव जिसमें अशुभ लक्षण वाले हो।  
 (ब) सभी अवयव शुभ हो।  
 (स) ऊपर के अवयव अशुभ हो ॥
14. किन दो शरीरों के अंगोपांग नहीं होते हैं?  
 (अ) कार्मण तैजस।  
 (ब) थड-शाखा।  
 (स) औदारिक-वैक्रिय।
15. परमात्मा की पूजा भक्ति के प्रभाव से किसने तीर्थकर नामकर्म बाँधा ?  
 (अ) कुमारपाल  
 (ब) देवपाल।  
 (स) अन्य कोई।
16. अवधिज्ञान क्या है?  
 (अ) इन्द्रियों के बिना ही आत्मा, जिसके बल पर रूपी द्रव्यों का साक्षात् ज्ञान करती है।  
 (ब) मन के भाव जिससे जाने जा सके।  
 (स) शास्त्रीय ज्ञान

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /165

17. मनुष्य का शरीर किस वर्गणा से बनता है?  
 (अ) औदारिक।  
 (ब) वैक्रिय।  
 (स) कार्मण।
18. गुरु के प्रति दुर्भाव से कौनसे मुनि चारित्र से भ्रष्ट हुए ?  
 (अ) झांझरिया।  
 (ब) खंधक।  
 (स) कुलवालक।
19. ज्ञानावरणीय कर्म किसके समान है?  
 (अ) आँख की पट्टी। (ब) द्वारपाल।  
 (स) अन्य कोई।
20. सातवीं नरक के नारकी का आयुष्य कितना है?  
 (अ) तैंतीस सागरोपम।  
 (ब) बीस सागरोपम।  
 (स) अन्य कोई।
- सूचना- शिविर की अवधि में आपको कई प्रेरक कहानियाँ सुनाई जाती हैं। कथा के पात्र भी अनेक होते हैं। कई ने अच्छे कार्य किए और कई ने बुरे काम भी किये। नीचे ऐसे काम दिये गये हैं। उत्तर में नम्बर लिखिये।
21. पुत्र के साथ गलत कार्य किसने किया?  
 (अ) कामलक्ष्मी। (ब) रूक्मिणी।  
 (स) अन्य कोई।

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 166

22. गुरु के दोष देखने से कौन बोधिदुर्लभ बना ?

(अ) कुलवालक । (ब) मेतारज ।

(स) खंधक ।

सूचना- नीचे के प्रश्नों के सही उत्तरों को उत्तर पत्र पर लिखिये ।

23. Odd Man out असंबद्ध शब्दों को खोज निकालिये ।

(अ) ज्ञानावरण (ब) दर्शनावरण

(स) वेदना

सूचना- निम्न प्रश्नों के उत्तर पाँच लाईनों में लिखिये ।

24. गुणमंजरी ने ज्ञानावरणीय कर्म का उपार्जन किस तरह किया ?

25. क्षमा पर दृढप्रहारी का उदाहरण स्पष्ट कीजिये ।

कर्मवाद से जीवन में शांति और समाधि कैसे प्राप्त होती है? 'रे कर्म ! तेरी गति न्यारी' को पढ़ने से आपको कर्मवाद की बातों को जानने को मिली है। पुस्तिका पर अपने स्वतंत्र विचार प्रस्तुत कीजिये।

आइये, हम अपने जवाबों की तुलना करें।

- |       |       |       |       |
|-------|-------|-------|-------|
| 1. स  | 2. अ  | 3. ब  | 4. अ  |
| 5. ब  | 6. अ  | 7. अ  | 8. अ  |
| 9. अ  | 10. अ | 11. अ | 12. ब |
| 13. स | 14. अ | 15. अ | 16. ब |
| 17. अ | 18. अ | 19. स | 20. अ |
| 21. अ | 22. ब | 23. स |       |

रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! /167





रे कर्म तेरी गति न्यारी...!! / 168



अष्ट कर्म

